अहिंसा, आगम और विज्ञान से आलोकित श्रेष्ठतम पत्रिका

भाव विज्ञान

BHAV VIGYAN

2019 अशोका गार्डन वर्षायोग समापन पर हुआ पिच्छिका परिवर्तन समारोह पर प्रवचन देते हुए आचार्यश्री आर्जवसागरजी।

वीर निर्वाण संवत् - 2546
पौष शुक्ल, वि.सं. 2076, दिसंबर 2019

अंक : पचास

वर्ष : तेरह

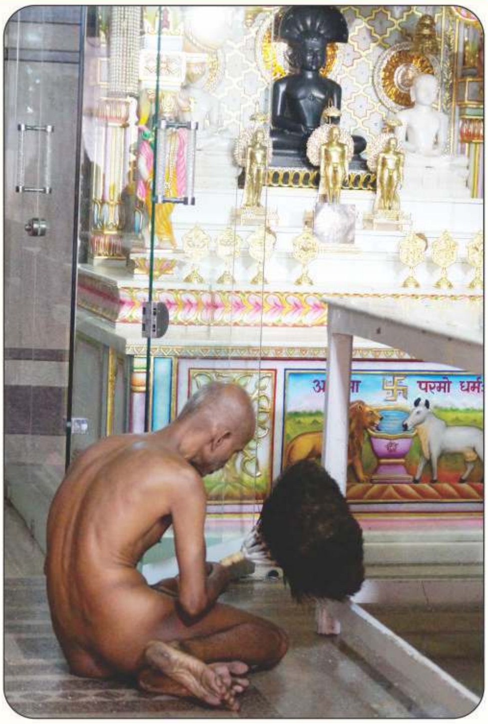

मूलनायक श्री पार्श्वनाथ भगवान, अशोका गार्डन, भोपाल

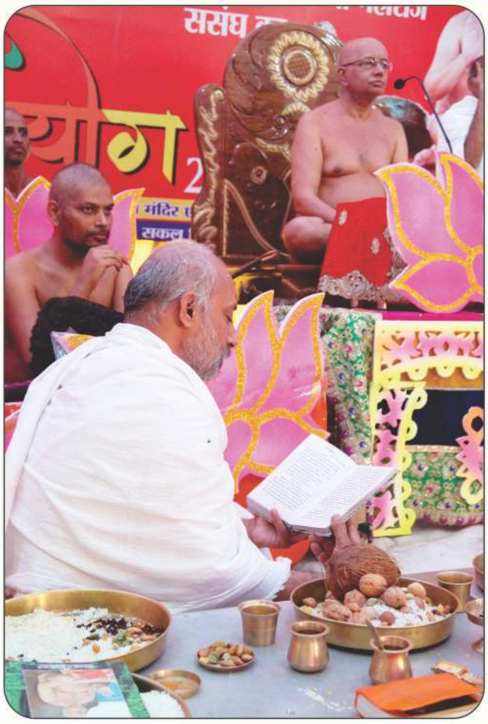

अशोका गार्डन में कार्तिक अष्टाह्निका पर्व पर सिद्धचक्र विधान करवाते हुए ब्र. पंकज भैया।

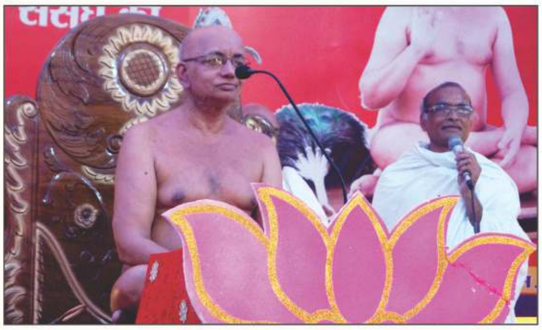

सिद्धचक्र महामण्डल विधान में मंत्रोच्चारण करते हुए।

आ.श्री आर्जवसागरजी की भक्ति वंदना करते हुए संघस्थ मुनिगण।

मंचासीन आर्यिका द्वय मंगलाचरण करते हुए।

आशीर्वाद व प्रेरणा

संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज से दीक्षित

आचार्यश्री 108 आर्जवसागर जी महाराज ।

रजिस्ट्रेशन क्रं. MPHIN/2007/27127

त्रैमासिक
भाव विज्ञान
(BHAV VIGYAN)

वर्ष-तेरह
अंक - पचास

• परामर्शदाता •

प्राचार्य डॉ. शीतलचंद जैन, जयपुर

मो. 9414783707, 8505070927

। सम्पादक ।

डॉ. अजित कुमार जैन,

MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स,

कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003

मो. : 7222963457, व्हाट्सएप: 9425601161

email : bhav.vigyan@gmail.com

• प्रबंध सम्पादक •

डॉ. सुधीर जैन, प्राध्यापक

85, डी.के. काटेज, ई-8 एक्सटेंशन, अरेरा कालोनी, भोपाल मो. 9425011357

• सम्पादक मंडल •

पं. जय कुमार 'निशांत', टीकमगढ़ (म.प्र.)

डॉ. संजय जैन (एडवोकेट), इंदौर (म.प्र.)

डॉ. श्रीमती अल्पना जैन (मोदी), ग्वालियर (म.प्र.)

इंजी. महेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)

श्री सुनील वेजीटेरियन, दमोह (म.प्र.)

• कविता संकलन •

पं. लालचंद जैन 'राकेश', भोपाल

• प्रकाशक •

श्रीमती सुषमा जैन धर्मपत्नी डॉ. अजित जैन

MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 मो.: 7024373841

email : bhav.vigyan@yahoo.co.in

• आजीवन सदस्यता शुल्क •

शिरोमणी संरक्षक	:	50,000 से अधिक
पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक	:	24,500
परम संरक्षक	:	21,000
पुण्यार्जक संरक्षक	:	18,000
सम्मानीय संरक्षक	:	11,000
संरक्षक	:	5,100
विशेष सदस्य	:	3,100
आजीवन (स्थायी)सदस्यता	:	1,500

कृपया सदस्यता शुल्क प्रकाशक के एवं रचनाएँ प्रबंध सम्पादक के पते पर भेजें।

पल्लव दर्शिका

विषय वस्तु एवं लेखक — **पृष्ठ**

2. आगम-अनुयोग [प्रश्नोत्तर-प्रदीप] - आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज 4

2. सम्यग्ज्ञान-भूषण व सिद्धान्त-भूषण पद हेतु त्रैमासिक धार्मिक प्रश्न-पत्र एवं नियमावली 14

3. पौराणिक संस्कृति - श्री नाथूलालजी जैन शास्त्री 17

4 अपील-नीति अयोग, नई दिल्ली के विज़न डाक्यूमेंट-2035 में पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम (PDS) के 'फूड आयटम्स' की सूची में अंडा, मांस, मछली एवं चिकन आदि मांसाहार सामग्री हटवाए जाने बावत् ज्ञापन (निवेदन- सभी पाठकगण यह पत्र एवं इसकी प्रतिलिपी अवश्य ही संबंधितों को भेजें) - 36

5. समाचार 39

लेखक एवं विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

भाव विज्ञान से संबंधित समस्त निर्णयों/न्यायों के लिए न्याय क्षेत्र भोपाल ही मान्य होगा।

सम्यग्ज्ञान-भूषण एवं सिद्धांत-भूषण पदवी हेतु भाव-विज्ञान धार्मिक परीक्षा बोर्ड, भोपाल द्वारा स्वीकृत

आचार्यश्री आर्जवसागर विरचित

आगम-अनुयोग

[प्रश्नोत्तर-प्रदीप]

करणानुयोग

प्र. 525 लोक कहाँ पर स्थित है?

उत्तर समस्त आकाश के मध्य में लोक स्थित है। तथा उसके बाहर सर्व दिशाओं में अनन्त आकाश है जो अलोकाकाश कहलाता है।

प्र.526 सम्पूर्ण लोक को किसने बनाया है?

उत्तर यह सम्पूर्ण लोक स्वाभाविक रूप से अकृत्रिम है, किसी के द्वारा रचाया हुआ नहीं, न इसका आदि है और न अन्त है, यह नित्य और शाश्वत रूप है।

प्र.527 लोक का आकार किस तरह का है?

उत्तर अपने दोनों पैरों को फैलाकर और दोनों हाथों को अपनी कमर के दोनों ओर रखकर खड़े हुए पुरुष सदृश लोक का आकार है अथवा वेत्रासन सदृश आधे मृदंग को खड़ा करके उसके ऊपर पूरे मृदंग को खड़ा रखने जैसा आकार वाला लोक आकार है।

प्र.528 लोक का विस्तार कितना है?

उत्तर लोक का विस्तार दक्षिणोत्तर दिशारूप से सर्वत्र सात राजू मोटा है। पूर्व से पश्चिम दिशाओं में नीचे सात राजू, ऊपर की ओर क्रमशः घटता हुआ मध्य लोक में एक राजू, फिर क्रम से बढ़ता हुआ ब्रह्मलोक के पास पांच राजू, तदुपरान्त क्रम से घटता हुआ अन्त में एक राजू प्रमाण चौड़ा है।

प्र.529 लोक की ऊँचाई कितनी है?

उत्तर लोक की ऊँचाई अधोलोक से लेकर ऊपर अन्त तक चौदह राजू प्रमाण है।

प्र.530 सम्पूर्ण लोक का घन-फल कितना है?

उत्तर सम्पूर्ण लोक का घनफल सात राजू का घन अर्थात् तीन सौ तैतालीस घन राजू प्रमाण है।

प्र.531 अधोलोक का क्षेत्रफल और घनफल कितना है?

उत्तर अधोलोक की चौड़ाई का मुख (प्रारम्भ) एक राजू, भूमि सात राजू फिर इन दोनों को जोड़कर आधा करने पर चार राजू होते हैं यह अधोलोक का क्षेत्रफल है, इस चार राजू को पद अर्थात् ऊँचाई सात राजू से गुणा करने पर अट्ठाईस वर्ग राजू अधोलोक का क्षेत्रफल होता है। इस क्षेत्रफल का दक्षिणोत्तर विस्तार सात राजू से गुणा करने पर एक सौ छियानवे घन राजू अधोलोक का घनफल होता है।

प्र.532 ऊर्ध्वलोक का क्षेत्रफल और घनफल कितना है?

उत्तर अर्ध ऊर्ध्वलोक की चौड़ाई का मुख (नीचे से प्रारम्भ) एक राजू भूमि (ऊपर अंत) पाँच राजू इन दोनों को जोड़कर आधा करने से तीन राजू होते हैं, इस तीन राजू को पद अर्थात् ऊँचाई साढ़े तीन राजू से गुणा करने पर इक्कीस बटा दो वर्ग राजू अर्ध ऊर्ध्वलोक का क्षेत्रफल होता है। इस क्षेत्रफल को दक्षिणोत्तर विस्तार सात राजू से गुणा करने पर एक सौ सैतालीस बटा दो घन राजू अर्ध ऊर्ध्वलोक का घनफल प्राप्त होता है। इससे दुगुणा व्यालीस वर्ग राजू और एक सौ सैतालीस घन राजू क्रमश: पूरे ऊर्ध्व लोक का क्षेत्रफल और घनफल प्राप्त होता है।

प्र.533 आगम में अधोलोक की रचना किस तरह की विधिवत् वर्णित की गई है?

उत्तर जिनागम में वर्णित है कि मेरु पर्वत के नीचे सात राजू प्रमाण अधोलोक है। मेरु पर्वत के तल से लेकर छ: राजू में रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा, बालुकाप्रभा, पङ्कप्रभा, धूमप्रभा, तम:प्रभा और महातम:प्रभा नाम की सात पृथ्वियाँ हैं। इसके नीचे एक राजू प्रमाण स्थान भूमि बिना निगोद आदिक पाँच स्थावरों से युक्त स्थावरलोक या कलकल लोक है। (विशेष वर्णन आगे कहेंगे)

प्र.534 मध्यलोक का स्वरूप किस तरह का है?

उत्तर मेरु पर्वत की ऊँचाई प्रमाण मध्यलोक है। जहाँ असंख्यात द्वीप समुद्रों के बीचों बीच मेरु पर्वत है जो एक हजार योजन पृथ्वी के अंदर जड़रूप से स्थित है। निन्यानवे हजार योजन बाहर अर्थात् पृथ्वी पर है और चालीस योजन ऊँची जिसकी चूलिका है।

प्र.535 ऊर्ध्वलोक का स्वरूप कैसा है?

उत्तर ऊर्ध्वलोक की ऊँचाई; मध्यलोक की ऊँचाई एक लाख चालीस योजन से कम सात राजू प्रमाण है। मेरु पर्वत की चूलिका से एक बाल का अन्तर देकर लोकान्त तक अर्थात् सात राजू पर्यन्त ऊर्ध्वलोक है। ऊर्ध्वलोक में सोलह स्वर्ग, नौ ग्रैवेयक, नौ अनुदिश, पञ्च अनुत्तर एवं सिद्धलोक की रचना है।

प्र.536 सम्पूर्ण लोक का आधार क्या है? और वह आधार किस रूप में है?

उत्तर घनोदधि वातवलय, घनवातवलय और तनुवातवलय ये तीन वातवलय लोक का आधार हैं। जैसे- वृक्ष छाल से घिरा होता है वैसे ही लोक इन वातवलयों घिरा हुआ है। जिस तरह किसी खिलोने की नली को मुख के द्वारा सावधानी पूर्वक धीरे-धीरे फूके जाने पर वायु के दबाव से एक हल्की सी गेंद उस वायु के बीच ऊपर उठी (या उड़ती सी) रहती है उसी तरह सभी ओर से व घने रूप से बड़े प्रमाण में वायु के दबाव से यह तीन लोक अनन्त आकाश के बीचोंबीच उस वायु रूपी वातवलयों के आधार से टिका हुआ है।

प्र.537 तीनों वातवलयों का रंग कैसा है?

उत्तर तीनों वातवलयों का रंग क्रमश: हल्का पीत गोमूत्रवत् हल्का हरित मूंगवत् और अनेक रंगों से मिश्रित है।

प्र.538 लोक में तीनों वातवलयों की मोटाई कहाँ, कितनी है?

उत्तर लोकाकाश के अधोभाग में, दोनों पार्श्वभागों में नीचे से एक राजू ऊँचाई अर्थात् पञ्च स्थावर लोक

पर्यन्त तीनों वातवलय प्रत्येक बीस-बीस हजार योजन मोटे हैं।

दोनों पार्श्वभागों में एक राजू के ऊपर सप्तम पृथ्वी के निकट आठों दिशाओं में तीनों वातवलय यथाक्रम से सात, पाँच, और चार योजन मोटे हैं। फिर क्रमश: घटते हुए मध्यलोक की आठों दिशाओं में पाँच, चार और तीन योजन मोटे रह जाते हैं।

आगे क्रमश: बढ़ते हुए ब्रह्मलोक की आठों दिशाओं में सात, पाँच और चार योजन मोटे हो जाते हैं। फिर ऊपर क्रमश: घटते हुए लोकाग्र के पार्श्व भाग में पाँच, चार और तीन योजन मोटे रह जाते हैं। अन्त में ये तीनों ही वातवलय लोक शिखर पर क्रमश: दो कोस, एक कोस और पन्द्रह सौ पचत्तर धनुष प्रमाण मोटे रह जाते हैं।

प्र.539 लोक का मध्य स्थान कौन-सा कहलाता है?

उत्तर लोक मध्यलोक में स्थित मेरु पर्वत के नीचे वज्र व वैडूर्य पटलों के बीच में चौकोर संस्थान रूप से अवस्थित आकाश के आठ प्रदेश लोक का मध्य कहलाते हैं।

प्र.540 लोक में कौन-से स्वर्ग आदिक और लोकान्त तक की ऊँचाई तक कितने राजू के प्रमाण रूप लोक होता है?

उत्तर लोक मध्य से ऊपर ऐशान स्वर्ग एक डेढ़ राजू, माहेन्द्र स्वर्ग तक तीन राजू, ब्रह्मस्वर्ग तक साढ़े तीन राजू, कापिष्ठ स्वर्ग तक चार राजू, महाशुक्र स्वर्ग तक साढ़े चार राजू, सहस्रार स्वर्ग तक पाँच राजू, प्राणत स्वर्ग तक साढ़े पाँच राजू, अच्युत स्वर्ग तक छ: राजू और लोकान्त तक सात राजू ऊँचाई है।

प्र.541 लोक में अधोलोक सम्बन्धी कौन-सी भूमि तक कितने राजू का प्रमाण होता है?

उत्तर लोक मध्य से शर्करा पृथ्वी तक एक राजू, उसके नीचे पुन: पाचों पृथ्वियाँ क्रमश: एक-एक राजू प्रमाण में हैं। इस तरह सप्तम पृथ्वी तक छ: राजू और कलकल नामक लोक से नीचे लोकान्त तक सात राजू होते हैं।

प्र.542 लोक की चौड़ाई कहाँ कितनी है?

उत्तर लोक के नीचे अधोलोक के मूल में चौड़ाई सात राजू, मध्यलोक में एक राजू, ब्रह्मलोक में पाँच राजू और लोक के अग्रभाग रूप सर्वोच्य स्थान पर एक राजू चौड़ाई है।

प्र.543 लोक में कौन-से जीव कहाँ पाये जाते हैं?

उत्तर पृथ्वीकायिक आदि पाँच के स्थावर जीव सम्पूर्ण लोक में भरे हुए हैं, परन्तु त्रस जीव समुद्घातादि अवस्थाओं के बिना त्रस जीव नाड़ी में ही रहते हैं।

प्र.544 त्रस नाड़ी कहाँ है और वह कितनी लम्बी, चौड़ी और ऊँची है?

उत्तर त्रस नाड़ी लोक मध्य में है और वह एक राजू लम्बी, एक राजू चौड़ी तथा चौदह राजू ऊँची है।

प्र.545 त्रस नाड़ी यह नाम क्यों पड़ा, क्या त्रस नाड़ी में त्रस जीव मात्र ही रहते हैं या स्थावर जीव भी रहते हैं तथा त्रस जीव त्रस नाड़ी के सम्पूर्ण स्थान में रहते हैं या कुछ विशेषता है?

उत्तर त्रस जीवों के रहने का स्थान मात्र त्रस नाड़ी ही है अत: त्रस जीवों के रहने के स्थान का सार्थक नाम त्रस

नाड़ी पड़ा। स्थावर जीव तो लोक में त्रसनाड़ी के अन्दर बाहर सर्वत्र पाये जाते हैं। तथा त्रस नाड़ी में भी त्रस जीव कुछ कम तेरह राजू के स्थान में ही पाये जाते हैं।

प्र.546 त्रस नाड़ी में त्रस जीवों से रहित स्थान कौन-कौन-सा है?

उत्तर त्रस नाड़ी में स्थित सप्तम महातम: पृथ्वी के मध्य भाग में ही नारकी रहते हैं उसके नीचे वे त्रस जीव नहीं रहते हैं।

सातवी पृथ्वी के नीचे कलकल लोक के एक राजू प्रमाण क्षेत्र में त्रसों बिना पंच स्थावर जीव मात्र ही रहते हैं। ऊर्ध्वलोक में भी सर्वार्थसिद्धि विमान तक ही त्रस जीव रहते हैं। लोक के अग्रभाग में त्रसादि नामकर्म या अष्टकर्म रहित सिद्ध परमेष्ठियों का निवास है।

प्र. 547 उपपाद की अपेक्षा त्रस जीव त्रस नाड़ी के बाहर किस तरह से पाये जाते हैं?

उत्तर त्रस नाड़ी के बाहर रहने वाला कोई स्थावर जीव मरण करके त्रस पर्याय में उत्पन्न होने के लिए त्रस नाड़ी की ओर आ रहा है; उस समय उस जीव के विग्रहगति में ही त्रसनामकर्म का उदय आ जाने से जितने समय तक वह त्रसनाड़ी के बाहर विग्रहगति में रहता है, उतने समय तक उपपाद की अपेक्षा उस त्रस जीव का त्रसनाड़ी के बाहर सद्भाव पाया जाता है।

प्र.548 मारणान्तिक समुद्घात की अपेक्षा त्रसजीव त्रसनाड़ी के बाहर किस तरह से पाया जाता है?

उत्तर त्रस नाड़ी के भीतर रहने वाला कोई त्रसजीव त्रस नाड़ी के बाहर स्थावर जीव में उत्पन्न होने के लिए मरण से पूर्व मारणान्तिक समुद्घात करता है; मरण से पूर्व उस जीव के त्रसनामकर्म का उदय हो जाने से त्रसनामकर्म सहित वह जीव त्रसनाड़ी के बाहर पाया जाता है।

प्र.549 लोक पूरण समुद्घात की अपेक्षा त्रसजीव त्रसनाड़ी के बाहर किस रूप में पाया जाता है?

उत्तर लोकपूरण समुद्घात में जब केवली भगवान् के आत्मप्रदेश समस्त लोक में फैलते हैं, उस समय भी त्रसनाड़ी के बाहर त्रसजीव (केवली भगवान का त्रसनामकर्म का उदय होने से) पाये जाते हैं।

प्र.550 रत्नप्रभा नामक प्रथम पृथ्वी के कितने भाग हैं?

उत्तर रत्नप्रभा नामक प्रथम पृथ्वी के तीन भाग हैँ- खरभाग, पंकभाग और अब्बहुल भाग।

प्र.551 खरभाग, पंकभाग और अब्बहुलभाग का बाहल्य (मोटाई) का प्रमाण कितना है?

उत्तर खरभाग, पंकभाग और अब्बहुलभाग का बाहल्य क्रमश: सोलह हजार योजन चौरासी हजार योजन और अस्सी हजार योजन है। अत: प्रथम पृथ्वी की मोटाई (बाहल्य) एक लाख अस्सी हजार योजन प्रमाण है।

प्र.552 खरभाग भाग में कितने बाहल्य प्रमाण वाली कितनी और कौन-सी उप पृथ्वियाँ हैं?

उत्तर खरभाग में एक-एक हजार योजन मोटी 1. चित्रा, 2. वज्रा, 3. वैडूर्या, 4.लोहिता, 5. मसारकल्पा, 6.गोमेदा, 7.प्रवाला, 8.ज्योतिरसा, 9.अञ्जना, 10.अञ्जनमूलिका, 11.अङ्का, 12.स्फटिका, 13.चन्दना, 14.सर्वार्थका, 15.बकुला, 16.शैला ये सोलह उप पृथ्वियाँ हैं। विशेष- इन पृथ्वियों के बीच में किसी में किसी प्रकार का अन्तराल नहीं है।

प्र.553 इन चित्रा आदि पृथ्वियों की लम्बाई , चौड़ाई कितनी है?

उत्तर इन चित्रा आदि पृथ्वियों की लम्बाई, चौड़ाई पंकभाग व अब्बहुल भाग की तरह लोक प्रमाण है। तिर्यक् में ये पृथ्वियाँ वातवलयों तक फैली हुई हैं।

प्र.554 शर्करा आदिक पृथ्वियों की मोटाई कितनी है?

उत्तर द्वितीय शर्करा प्रभा पृथ्वी की मोटाई 32,000 योजन, बालुका प्रभा की 28,000 योजन, पंकप्रभा की 24,000 योजन, धूमप्रभाकी 20,000 योजन, तम:प्रभा की 16,000 योजन और महातम:प्रभा की 8,000 योजन मोटाई है।

प्र.555 रत्नप्रभादि सप्त पृथ्वीयों में पटलों (पापड़ों) की संख्या कितनी है?

उत्तर रत्नप्रभा पृथ्वी में 13 पटल, शर्कराप्रभा में 11 पटल, बालुकाप्रभा में 9 पटल, पंकप्रभा में 7 पटल, धूमप्रभा में 5 पटल, तम:प्रभा में 3 पटल और महातम:प्रभा में 1 पटल है। इस तरह सातों पृथ्वियों में कुल 47 पटल हैं। ये पटल एक दूसरे से संश्लिष्ट (सटे) हैं।

प्र.556 नरक और नारकी किसे कहते हैं?

उत्तर रत्नप्रभादिक सप्त पृथ्वियों के पटलों में होने वाले कुएँ के समान बिलों को नरक कहते हैं और उन नरकों में रहने वाले नारकी कहलाते हैं।

प्र.557 पृथ्वी-पटलों में होने वाले नरक-बिलों के नाम किस रूप में होते हैं?

उत्तर पृथ्वी-पटलों में होने वाले नरक-बिलों के नाम इन्द्रक, श्रेणिबद्ध और प्रकीर्णक रूप में होते हैं।

प्र.558 नरक-बिलों की इन्द्रक आदि संज्ञा क्यों है?

उत्तर जो अपने पटल के सर्व बिलों के बीचोंबीच में होता है, उसे इन्द्रक बिल कहते हैं। इस इन्द्रक बिल की चारों दिशाओं एवं विदिशाओं में जो बिल पंक्तिरूप से स्थित होते हैं, उन्हें श्रेणिबद्ध बिल कहते हैं। जो श्रेणिबद्ध बिलों के बीच-बीच में बिखरे हुए पुष्पों के समान यत्र-तत्र स्थित हैं, उन्हें प्रकीर्णक बिल कहते हैं। यह रचना अधोलोक की पृथ्वियों सम्बन्धी प्रत्येक पटल में रहती है।

प्र.559 सप्त पृथ्वियों के पटलों में नरक बिल कितने हैं और उन बिलों का विन्यास कहाँ व किस तरह से है?

उत्तर प्रथम रत्नप्रभा पृथ्वी के तेरह पटलों में तेरह इन्द्रक बिल हैं। दूसरी आदि पृथ्वियों में पटलों की संख्यानुसार ही क्रमश: ग्यारह, नौ, सात, पाँच, तीन और एक इन्द्रक बिल हैं, इस तरह कुल बिल संख्या उनन्चास है।

प्रथम भूमि के प्रथम पटल में स्थित इन्द्रक बिल की एक-एक दिशा में 59-59 और विदिशाओं में 48-48 श्रेणिबद्ध बिल हैं। द्वितीयादि इन्द्रक बिल से लेकर सप्तम पृथ्वी स्थित अन्तिम इन्द्रक बिल तक श्रेणिबद्ध बिलों की संख्या एक-एक कम होते हुए अन्तिम इन्द्रक बिल की चारों दिशाओं में तो एक-एक श्रेणिबद्ध बिल मिलता है। परन्तु विदिशाओं में श्रेणिबद्ध बिलों का अभाव है। सातवी पृथ्वी में प्रकीर्णक बिलों का अभाव है।

प्र.560 सप्त पृथ्वियों में श्रेणीबद्ध नरक-बिलों की सम्पूर्ण संख्या कितनी है?

उत्तर रत्नप्रभादि सप्त पृथ्वियों में श्रेणीबद्ध रूप सम्पूर्ण नरक-बिलों की संख्या नौ हजार छह सौ चार है।

प्र.561 प्रथम पृथ्वी से लेकर छठी पृथ्वी तक प्रकीर्णक नरक-बिलों की सम्पूर्ण संख्या कितनी है?

उत्तर प्रथम पृथ्वी से लेकर छठी पृथ्वी तक प्रकीर्णक नरक-बिलों की सम्पूर्ण संख्या तेरासी लाख नब्बे हजार तीन सौ सैंतालीस है।

प्र.562 रत्नप्रभादि सप्त पृथ्वियों में स्थित नरक-बिलों की संख्या कितनी-कितनी है?

उत्तर रत्नप्रभादि सप्त पृथ्वियों में स्थित नरक-बिलों की संख्या क्रमशः तीस लाख, पच्चीस लाख, पन्द्रह लाख, दस लाख, तीन लाख, पांच कम एक लाख और मात्र पाँच है।

प्र.563 सप्त पृथ्वियों के सम्पूर्ण नरक-बिलों की संख्या कितनी है?

उत्तर सप्त पृथ्वियों के सम्पूर्ण नरक-बिलों की संख्या चौरासी लाख है।

प्र.564 नरक-बिलों का विस्तार और आकार कितना और कैसा होता है?

उत्तर इन्द्रक नामक नरक-बिल संख्यात योजन विस्तार वाले ही होते हैं। श्रेणीबद्ध नरक-बिल असंख्यात योजन विस्तार प्रकीर्णकों में कुछ प्रकीर्णक बिल संख्यात योजन और कुछ असंख्यात योजन विस्तार वाले होते हैं। ये नरक-बिल गोल, चौकोर और त्रिकोण आकार वाले होते हैं।

प्र.565 कौन-सी पृथ्वी पर्यन्त के कितने नरक-बिलों में नारकी जीवों के लिए कैसी तीव्र उष्ण की वेदना होती है?

उत्तर प्रथम पृथ्वी से लेकर पांचवी पृथ्वी के चार भागों में से तीन भागों पर्यन्त में स्थित 8225000 नरक-बिलों में नारकी जीवों के लिए लोहे के गोले को पिघलाने जैसी तीव्र उष्ण वेदना होती है।

प्र.566 कौन-सी पृथ्वी से कौन-सी पृथ्वी पर्यंत वाले कितने नरक-बिलों में स्थित नारकी जीवों के लिए कैसी अत्यन्त शीत वेदना होती है?

उत्तर पाँचवी पृथ्वी के शेष चौथाई भाग में तथा छठी और सातवी पृथ्वी में स्थित 1,75,000 नरक-बिलों में नारकी जीवों के लिए लोह जल को गोले रूप जमाने जैसी अत्यन्त शीत वेदना होती है।

प्र.567 रत्नप्रभा पृथ्वी के प्रथम सीमन्तक नामक इन्द्रक बिल का विस्तार कितना है?

उत्तर रत्नप्रभा पृथ्वी के प्रथम सीमन्तक नामक इन्द्रक बिल का विस्तार मनुष्य क्षेत्र सदृश पैंतालीस लाख योजन प्रमाण है।

प्र.568 महातम:प्रभा पृथ्वी के अवधिस्थान नामक अन्तिम बिल का विस्तार कितना है?

उत्तर महातम:प्रभा पृथ्वी के अवधिस्थान नामक अन्तिम बिल का विस्तार जम्बूदीप सदृश एक लाख योजन प्रमाण है।

प्र.569 नारकियों के उत्पत्ति स्थान कहाँ पर और कैसे आकार वाले हैं?

उत्तर नारकियों के उत्पत्ति स्थान नरक-बिलों के उपरिम भाग में अनेक प्रकार के शस्त्रों से युक्त अधोमुख कण्ठ वाले, भीतर गोल तथा बाहर सात, तीन, दो, एक और पाँच कोने वाले होते हुए उष्ट्रिका कुम्भी आकार अनेक मुखाकार होते हैं।

प्र.570 नारकियों के उत्पत्ति स्थानों की चौड़ाई और ऊँचाई कितनी है?

उत्तर नारकियों के उत्पत्ति स्थानों की चौड़ाई प्रथम पृथ्वी से लेकर सातवीं पृथ्वी तक क्रमश: एक कोस, दो कोस, तीन कोस, एक योजन, दो योजन, तीन योजन और सौ योजन प्रमाण है। तथा ऊँचाई अपनी-अपनी अवगाहना से पाँच गुणी है।

प्र.571 उत्पत्ति स्थानों में उत्पन्न होते ही नारकियों की क्या स्थिति होती है?

उत्तर उत्पत्ति स्थानों में उत्पन्न होते ही नारकी तीक्ष्ण शस्त्रों पर गिरते हुए सातों पृथ्वियों के नरक-बिलों में क्रमश: 7 योजन $3\frac{1}{4}$ कोस, 15 योजन $2\frac{1}{2}$ कोस, 31 योजन 1 कोस, 62 योजन 2 कोस, 125 योजन, 250 योजन तथा 500 योजन ऊपर उछलते हैं और पुन: शस्त्रों पर आ पड़ते हैं।

प्र.572 नारकियों की शरीर की ऊँचाई कितनी होती है?

उत्तर प्रथम रत्नप्रभा पृथ्वी के अन्तिम पटल में स्थित नारकियों के शरीर की ऊँचाई 7 धनुष 3 हाथ और 6 अंगुल प्रमाण होती है। शेष द्वितीयादि पृथ्वियों के अन्तिम पटल में रहने वाले नारकियों के शरीर की ऊँचाई क्रमश: दूनी-दूनी होते हुए सप्तम पृथ्वी के पटल में रहने वाले नारकियों के शरीर की ऊँचाई 500 धनुष प्रमाण होती है।

प्र.573 नारकियों की कौन-सी विक्रिया होती हैं?

उत्तर नारकियों की देवों सम पृथक विक्रिया न होकर अपृथक विक्रिया होती है।

प्र.574 अपृथक विक्रिया को नारकी किस तरह किया करते हैं?

उत्तर अपृथक विक्रिया को करते हुए नारकी अपने वैक्रियक शरीर को ही सर्प, व्याघ्र, भेड़िया, उल्लू, कौआ, बिच्छू, गृद्ध, कुत्ता, रीछ आदि तिर्यञ्च रूप तथा त्रिशूल, अग्नि, बरछी, तलवार, मुद्‌गर और सेमर वृक्ष आदि रूप बनाते हैं।

प्र.575 नरकों का वातावरण कैसा होता है?

उत्तर नरकों का सम्पूर्ण वातावरण महादु:खमय होता है। हजार बिच्छुओं के युगपत् काटे जाने पर जितनी वेदना होती उससे भी अधिक वेदना नरक भूमि के स्पर्श मात्र से होती है।

प्र.576 नरकों में नारकियों को होने वाले दु:ख कौन-कौन-से हैं?

उत्तर नरकों में नारकियों के लिए क्षेत्रीय, नारकी जीवों से उत्पन्न मानसिक, वाचनिक और कायिक तथा देवकृत भी अनेक असहनीय दु:ख प्राप्त होते हैं जैसे-

- तीन लोक के अनाज खाने जैसी भूख लगना।
- समुद्र के जैसे जल पी जाने वाली प्यास सताना।
- आपसी लड़ाई द्वारा बैर भंजाना।
- देवों द्वारा लड़ाया, भड़काया जाना।
- शस्त्रों पर गिराया जाना।
- यन्त्रों में पेला जाना।

- भाड़ में झोका जाना।
- कढ़ाई में तलाया जाना।
- शस्त्रों से छेदा और काटा जाना।
- जलती ज्वालाओं में पकाया जाना।
- पत्तों से तन कट जाना।
- गरम पुतली से चिपकाना।
- लोह रस पिलाया जाना।
- पारे की तरह तन का पिघल जाना।
- तन के तिल-तिल सम टुकड़े किये जाना।
- सिंह, भालू, कुत्ता, सर्प, गिद्ध और कौआ आदिक हिंसक तिर्यञ्चों द्वारा तन का भक्षण किया जाना इत्यादि।

प्र.577 नारकियों के लिए कहाँ तक कौन, कैसे लड़ाते भिड़ाते हैं?

उत्तर नारकियों के लिए तृतीय बालुका प्रभा पृथ्वी तक, असुरकुमार देवों में मिथ्या दृष्टि व पापिष्ठ स्वभाव वाले अम्बावरीष नामक दुष्ट देव नारकियों का बैर स्मरण कराकर उन्हें लड़ाते और भिड़ाते हुए मनोरञ्जन करते हैं।

प्र.578 नारकियों का भोजन किस तरह का होता है?

उत्तर नारकी जीव सड़े हुए माँस से भी अधिक दुर्गन्धित मिट्टी का आहार करते हैं।

प्र.579 नरकों में नारकियों का अवधिज्ञान कितने क्षेत्र तक होता है?

उत्तर सातों पृथ्वियों में क्रमश: नारकियों का अवधिज्ञान चार कोस, साढ़े तीन कोस, तीन कोस, ढाई कोस, दो कोस, डेढ़ कोस और एक कोस तक की वस्तु को जानता है।

प्र.580 रत्नप्रभादि पृथ्वियों में जन्म व मरण का अन्तरकाल कितना होता है?

उत्तर रत्नप्रभादि पृथ्वियों में नारकियों का जन्म व मरण के अधिक से अधिक अन्तरकाल का प्रमाण क्रमश: चौबीस मुहूर्त्त, सात दिवस, एक पक्ष, एक माह, दो माह, चार माह और छह माह है। अन्यथा हर समय जन्म-मरण है।

प्र.581 नरक गति से निकलने वाले जीवों की उत्पत्ति कहाँ-कहाँ पर होती है?

उत्तर नरक गति से निकले हुए जीव मनुष्य गति और तिर्यञ्च गति में ही उत्पन्न होते हैं। सातवी पृथ्वी से निकला हुआ जीव तिर्यञ्च गति में ही जन्म लेता है।

प्र.582 नरक गति से आकर जीव मनुष्य व तिर्यञ्च गति में कौन-कौन-सी अवस्था का प्राप्त होता है?

उत्तर ऐसा जीव कर्मभूमिज, गर्भज संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक मनुष्य और तिर्यञ्चों में ही जन्म लेता है।

प्र.583 सप्तम पृथ्वी से निकला जीव तिर्यञ्च गति में ही क्यों जन्म लेता है?

उत्तर क्योंकि सप्त पृथ्वी से निकला एक बार पुन: नरक में जावेगा यह नियोग है अत: वहाँ से निकल कर क्रूर तिर्यञ्च होता है और भयानक-अतीव पाप कर पुन: नरक में जाता है।

प्र.584 नरकों से निकले नारकी किन-किन अवस्थाओं में पैदा नहीं होते हैं?

उत्तर नरकों से निकले जीव एकेन्द्रि, विकलत्रय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय भोगभूमि, लब्ध्यपर्याप्तक, सम्मूर्च्छन और देव पर्याय के जीव रूप में उत्पन्न नहीं होते।

प्र.585 नरकगति से निकले जीव कौन-से पदधारी अवस्थाओं में उत्पन्न नहीं होते?

उत्तर नरकगति से निकले जीव नारायण, प्रतिनारायण, बलभद्र और चक्रवर्ती पदधारी अवस्थाओं में कदापि उत्पन्न नहीं होते।

प्र.586 तीर्थंकर प्रकृति बंध वाला जीव नीचे कितनी पृथ्वियों तक उत्पन्न हो सकता है?

उत्तर तीर्थंकर प्रकृति बंध वाला जीव नीचे तीन पृथ्वियों तक उत्पन्न हो सकता है।

प्र.587 तीर्थंकर प्रकृति का बंध करने वाला जीव किस कारण नरक पृथ्वियों में जाता है?

उत्तर जिस मनुष्य ने सम्यक्त्व धारण के पूर्व नरकायु का बंध कर लिया है, पश्चात् सम्यक्त्व को प्राप्त कर तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया है ऐसा जीव तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता वाला कहलाता है। वह नीचे तीसरी पृथ्वी तक के नरकों में उत्पन्न होता है।

प्र.588 कौन-सी पृथ्वी तक बद्धायुष्क जीव सम्यक्त्व के साथ उत्पन्न होता है?

उत्तर नरक बद्धायुष्क जीव सम्यक्त्व के साथ प्रथम पृथ्वी तक ही उत्पन्न होता है। उससे नीचे जाने वाले का सम्यक्त्व यहीं छूट जाता है।

प्र.589 तीर्थंकर प्रकृति बंध वाला सम्यक्त्व से च्युत जीव दूसरी तीसरी पृथ्वी में तीर्थंकर प्रकृति बंध सम्यक्त्व बिना कैसे करता है?

उत्तर तीर्थंकर प्रकृति बंध वाला जीव दूसरी, तीसरी पृथ्वी में जाकर अर्न्तमुहूर्त्त में सम्यग्दृष्टि बनकर पुन: तीर्थंकर प्रकृति का बंध करने लगता है।

प्र.590 कौन-कौन-से जीव नरकों में उत्पन्न नहीं होते हैं?

उत्तर एकेन्द्रिय और विकलत्रय जीव नरकों में उत्पन्न नहीं होते तथा नरक गति से नरक गति में जीव, देवगति के जीव, भोग भूमि के जीव चौबीस कामदेव एवं तीर्थंकरों के माता-पिता नरकों में उत्पन्न नहीं होते।

प्र.591 कौन-कौन-से जीव कौन-कौन-सी नरक-पृथ्वियों तक उत्पन्न हो सकते हैं?

उत्तर असंज्ञी पंचेन्द्रिय जीव प्रथम पृथ्वी तक, सरीसृप (छाती के बल से चलने वाले) द्वितीय पृथ्वी तक, पक्षी तृतीय पृथ्वी तक, भुजंगादि सर्प चतुर्थ पृथ्वी तक, सिंह पांचवी पृथ्वी तक, स्त्री छठी पृथ्वी तक, महामत्स्य एवं मनुष्य सप्तम पृथ्वी तक उत्पन्न हो सकते हैं।

प्र.592 संहनन की अपेक्षा कौन-से संहनन की जीव कौन-सी नरक पृथ्वी तक उत्पन्न हो सकते हैं?

उत्तर वज्रवृषभनाराच, वज्रनाराच, नाराच, अर्धनाराच, कीलक और असंप्राप्तासृपाटिका इन छह संहननों वाले संज्ञी जीव तीसरी पृथ्वी तक, असंप्राप्तासृपाटिका रहित पांच संहनन वाले पांचवी पृथ्वी तक,

अर्धनाराच पर्यन्त चार संहनन वाले छठी पृथ्वी तक और वज्रवृषभ नाराच संहनन वाले सातवी पृथ्वी तक उत्पन्न हो सकते हैं।

प्र.593 रत्नप्रभादि सप्त नरक पृथ्वियों में क्रमश: जीव अधिक से अधिक निरन्तर कितनी बार उत्पन्न हो सकता है?

उत्तर रत्नप्रभादि सप्त नरक पृथ्वियों में जीव क्रमश: अधिक से अधिक निरन्तर या बीच में एक पर्याय का अन्तर होते हुए भी निरन्तर कहलाते हुए-आठ बार, सात बार, छह बार, पाँच बार, चार बार, तीन बार और दो बार उत्पन्न हो सकता है।

प्र.594 अन्य पर्याय का अन्तर करने का तात्पर्य क्या है?

उत्तर हाँ! जैसे असंज्ञी प्रथम पृथ्वी तक उत्पन्न हो सकता है उसे द्वितीय बार नरक में जाने का भंग घटाने के लिए संज्ञी में आने के बाद एक बार असंज्ञी में जन्म दिलाना पड़ेगा क्योंकि नरक से निकला जीव असंज्ञी में जन्म नहीं लेता वह संज्ञी में जन्म लेकर, पुन: असंज्ञी में जन्मधारण कर नरक जावेगा तब ही अन्य पर्याय का अन्तर करते हुए भी निरन्तर का भंग (भेद) घटेगा या बनेगा। इसी तरह सम्मूर्च्छन जन्म वाले महामत्स्य को सप्तम पृथ्वी में द्वितीय बार जन्म दिलाने के लिए उसे वहाँ से निकलकर गर्भज तिर्यञ्च बनना पड़ेगा फिर सम्मूर्च्छन महामस्त्य बनकर सप्तम पृथ्वी जावेगा। उसी तरह सप्तम पृथ्वी से निकलकर जीव मनुष्य नहीं होता अत: क्रूर तिर्यञ्च बन फिर मनुष्य होकर सप्तम पृथ्वी जावेगा। इस तरह एक पर्याय का अन्तर करके भी नरक जाने पर निरन्तर कहलाता है।

प्र.595 रत्नप्रभादि सप्त नरक भूमियों में नारकियों की होने वाली लेश्या कैसी होती है?

उत्तर प्रथम और द्वितीय पृथ्वी के नारकियों के कपोत लेश्या, तृतीय पृथ्वी के उपरिम बिलों के नारकियों में कपोत लेश्या और नीचे के बिलों के नारकियों में नील लेश्या, चतुर्थ पृथ्वी के नारकियों में नील लेश्या, पंचम पृथ्वी के उपरितन बिलों के नारकियों में नील लेश्या और नीचे के बिलों के नारकियों में कृष्ण लेश्या, षष्ठ पृथ्वी के नारकियों में कृष्ण और सप्तम पृथ्वी के नारकियों में परम कृष्ण लेश्या होती है।

प्र.596 नारकियों में द्रव्य लेश्या किस प्रकार होती है?

उत्तर नारकियों में द्रव्य लेश्या (शारीरिक रंग) आयु प्रमाण काल तक एक समान ही रहता है।

प्र.597 नारकियों में भाव लेश्या में परिवर्तन किस तरह का होता है?

उत्तर नारकियो में भाव लेश्या अन्तर्मुहूर्त्त में परिवर्तनशील होती है। अर्थात् स्व-स्व कपोत आदि लेश्याओं में मंद-मंदतर-मन्दतम आदि अनेक अवान्तर भेद होते हैं।

प्र.598 नारकियों का शरीर किस संस्थान रूप होता है?

उत्तर नारकियों का शरीर हुण्डक संस्थान रूप असमान-कुरूप होता है।

प्र.599 नरक गति में उत्पन्न होने के कारण क्या हैं?

उत्तर नरक गति में उत्पन्न होने के कारण बहुत आरम्भरूप हिंसा, बहुत परिग्रह में आसक्ति, मिथ्यात्व की प्रबलता, मद्य मधु माँस का सेवन, देव, शास्त्र, गुरु का अवर्णवाद, मुनिहत्या, परधन हरण और परस्त्री

में आसक्ति आदि है।

प्र.600 सप्तम नरक पृथ्वी से निकला नारकी जीव सम्यग्दृष्टि क्यों नहीं बन सकता?

उत्तर क्योंकि उसका क्रूर तिर्यंच में जन्म लेकर मिथ्या दृष्टि रहना एवं पुन: नरक जाने रूप कार्यों में प्रवृत्त होकर नरक में पुन: एक बार उत्पन्न होना यह नियोग है। या निश्चित स्वभाव है।

प्र.601 छठी पृथ्वी से निकला नारकी जीव क्या प्राप्त कर सकता है?

उत्तर छठी पृथ्वी से निकला प्राणी सम्यग्दर्शन की प्राप्ति कर सकता है।

प्र.602 पाँचवी पृथ्वी से निकला नारकी जीव क्या प्राप्त कर सकता है?

उत्तर पाँचवी पृथ्वी से निकला नारकी जीव सकल संयम की प्राप्ति कर सकता है।

प्र.603 चतुर्थ पृथ्वी से निकला जीव कौन-सी अवस्था प्राप्त कर सकता है?

उत्तर चतुर्थ पृथ्वी से निकला जीव केवली व मोक्ष अवस्था प्राप्त कर सकता है।

प्र.604 प्रथम, द्वितीय और तृतीय पृथ्वी से निकला जीव कौन-सी विशिष्ठ अवस्था प्राप्त कर सकता है?

उत्तर प्रथम, द्वितीय और तृतीय पृथ्वी से निकला जीव त्रि-लोक का कल्याणकारी व पूज्य तीर्थंकर का पद प्राप्त कर सकता है।

प्र.605 तीर्थंकर के गर्भ में आने के छह माह पूर्व तीर्थंकर जन्म नगरी में जब रत्नों की वर्षा प्रारम्भ हो जाती है तब नरक से आने वाली आत्मा की वहाँ क्या स्थिति होती होगी?

उत्तर ऐसी मंगल बेला में सम्यग्दृष्टि देवगण तीर्थंकर बनने वाले नारकी जीव के चारों ओर कोट रूप बाढ़ लगाकर पहरा देते हैं और उस तीर्थंकर बनने वाली आत्मा को किञ्चित कष्ट नहीं होने देते।

प्र.606 प्रथम रत्नप्रभा पृथ्वी में नारकियों की जघन्य आयु कितनी होती है?

उत्तर प्रथम रत्नप्रभा पृथ्वी में नारकियों की जघन्य आयु दस हजार वर्ष की होती है।

प्र.607 प्रथम रत्नप्रभा पृथ्वी से लेकर अंतिम महातम:प्रभा पृथ्वी पर्यन्त नारकियों की उत्कृष्ट आयु कितनी होती है?

उत्तर सातों पृथ्वियों में क्रमश: एक सागरोपम, तीन सागरोपम, सात सागरोपम, दस सागरोपम, सत्तरह सागरोपम, बाईस सागरोपम और तैंतीस सागरोपम नारकियों की उत्कृष्ट आयु होती है।

प्र.608 द्वितीय आदिक पृथ्वियों में नारकियों की होने वाली जघन्य आयु का प्रमाण कितना है?

उत्तर द्वितीय आदिक पृथ्वियों में नारकियों की होने वाली जघन्य आयु का प्रमाण अपनी ऊपर वाली पूर्व पृथ्वी की उत्कृष्ट आयु के प्रमाण रूप है।

प्र.609 रत्नप्रभादि सप्त पृथ्वियों में नारकियों के लिए कौन-कौन-से सम्यग्दर्शनों की प्राप्ति संभव है?

उत्तर रत्नप्रभादि सप्त पृथ्वियों में नारकियों के लिए उपशम एवं क्षयोपशम सम्यग्दर्शन की प्राप्ति संभव है।

प्र.610 प्रथम नरक पृथ्वी से लेकर तृतीय नरक पृथ्वी तक रहने वाले नारकियों के लिए सम्यग्दर्शन की प्राप्ति में निमित्त कारण कौन-कौन-से हैं?

उत्तर प्रथम नरक पृथ्वी से लेकर तृतीय नरक पृथ्वी तक नारकियों के लिए सम्यग्दर्शन के निमित्त जातिस्मरण, धर्मश्रवण और और तीव्र वेदनानुभव ये तीन निमित्त हैं। जिनमें से किसी एक निमित्त-कारण से सम्यक्त्व प्राप्त हो सकता है।

प्र.611 चतुर्थ नरक पृथ्वी से लेकर सप्तम नरक पृथ्वी तक सम्यक्त्व प्राप्ति के निमित्त-कारण कौन-कौन-से हैं?

उत्तर चतुर्थ नरक पृथ्वी से लेकर सप्तम नरक पृथ्वी तक सम्यक्त्व प्राप्ति के निमित्त-कारण जातिस्मरण एवं तीव्र वेदनानुभव ये दो ही हैं।

प्र.612 नरक पृथ्वियों में धर्म श्रवण होना कैसे संभव होता है?

उत्तर पूर्वभव के परिचित देव तृतीय नरक भूमि तक जाकर उपकार के निमित्त नारकियों के लिए धर्मोपदेश देते हैं, अत: तृतीय पृथ्वी तक धर्मश्रवण निमित्त संभव है।

प्र.613 तृतीय पृथ्वी के नीचे धर्म-श्रवण निमित्त संभव क्यों नहीं है?

उत्तर प्रथम कारण कि तृतीय पृथ्वी के नीचे देवों का गमन नहीं है। द्वितीय कारण वहाँ के क्षेत्र का वातावरण अनुकूल न होने से तथा परस्पर में परोपकार की भावना नहीं होने से वहाँ के सम्यग्दृष्टि नारकी अन्य नारकियों को सम्बोधित नहीं करते अत: वहाँ धर्म श्रवण निमित्त संभव नहीं है।

प्र.614 प्रथम पृथ्वी में नारकियों की पर्याप्त अवस्था में कौन-से सम्यग्दर्शन पाये जाते हैं?

उत्तर प्रथम पृथ्वी में नारकियों की पर्याप्त अवस्था में उपशम, क्षायिक और क्षयोपशम ये तीनों सम्यग्दर्शन पाये जाते हैं।

प्र.615 प्रथम पृथ्वी में अपर्याप्त अवस्था में नारकियों के कौन-से सम्यग्दर्शन पाये जाते हैं?

उत्तर प्रथम पृथ्वी में अपर्याप्त अवस्था में नारकियों के क्षायिक सम्यग्दर्शन तथा कृतकृत्य वेदक की अपेक्षा क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन पाया जाता है।

प्र.616 कृतकृत्य वेदक की अपेक्षा क्षायोपशमिक सम्यग्दर्शन कैसे घटता है?

उत्तर क्षायिक सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के सम्मुख जीव जब तक मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और अनन्तानुबंधी चतुष्क का क्षय नहीं कर देता तक वह कृतकृत्य वेदक क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि कहलाता है और एक मत से वह मरण कर दूसरी गति में जाते समय उस जीव के अपर्याप्त अवस्था में ऐसी कृतकृत्य वेदक क्षायोपशमिक अवस्था घटित होती है।

प्र.617 द्वितीयादिक पृथ्वियों में जाते समय नारकियों की अपर्याप्त अवस्था में कोई सम्यग्दर्शन घटित होता है क्या?

उत्तर नहीं। क्योंकि सम्यग्दृष्टि जीव प्रथम पृथ्वी के आगे उत्पन्न नहीं होते।

प्र.618 मध्यलोक में स्थित शुभनाम वाले असंख्यात द्वीप समुद्रों में से मध्यस्थित शुभ नाम वाले कुछ द्वीप, समुद्रों के नाम कौन-से हैं?

उत्तर जैसे जम्बू द्वीप लवणोदधि समुद्र, घातकीखण्ड द्वीप कालोदधि समुद्र, पुष्करव द्वीप, पुष्करवर समुद्र,

वारुणीवर द्वीप, वारुणीवर समुद्र, क्षीरवर द्वीप, क्षीरवर समुद्र, घृतवरद्वीप, घृतवर समुद्र, क्षौरवर द्वीप, क्षौरवर समुद्र, नन्दीश्वर द्वीप, नन्दीश्वर समुद्र, कुण्डलवरद्वीप, कुण्डलवर समुद्र, रुचकवर द्वीप, रुचकवर समुद्र आदि अंतिम स्वयम्भूरमण द्वीप एवं स्वयम्भूरमण समुद्र तक असंख्यात द्वीप समुद्र हैं।

प्र.619 लवणोदधि आदिक समुद्रों का स्वाद कैसा है?

उत्तर वारुणीवर, लवणोदधि, घृतवर और क्षीरवर ये चार समुद्र अपने-अपने नामानुसार स्वाद वाले हैं। कालोदधि, पुष्करवर और स्वयंभूरमण ये तीन समुद्र जल सदृश स्वाद वाले हैं और शेष समुद्र इक्षुरस सदृश स्वाद वाले हैं।

प्र.620 सभी द्वीप और समुद्र मध्यलोक में किस तरह स्थित हैं?

उत्तर सभी द्वीपों और समुद्रों में प्रथम द्वीप जम्बूद्वीप थाली सदृश गोल वृत्ताकार रूप में तथा अन्य समुद्र व द्वीप चूड़ीसम वलयाकृति रूप में स्थित हैं। जो एक दूसरे को घेरे हुए हैं।

प्र.621 सर्व द्वीप और समुद्रों का विस्तार कितना है?

उत्तर नाभिसम मेरु पर्वत है जिसके ऐसा मध्य स्थित जम्बूद्वीप का विस्तार एकलाख योजन का है। उसके आगे लवण समुद्र से लेकर स्वयंभूरमण समुद्र पर्यन्त द्वीप समुद्रों के विस्तार क्रमशः दुगने-दुगने हैं।

प्र.622 सर्व समुद्र कितनी गहराई वाले हैं?

उत्तर चित्रा भूमि की मोटाई एक हजार योजन है और सर्वसमुद्र एक हजार योजन गहराई वाले हैं। अर्थात् सर्व समुद्रों का तल भाग चित्राभूमि को भेदकर वज्रापृथ्वी पर स्थित है।

प्र.623 ढाईद्वीप किसे कहा जाता है?

उत्तर जम्बूद्वीप, घातकीखण्ड और पुष्करार्ध द्वीप को ढाई द्वीप कहा गया है।

प्र.624 मानुषोत्तर पर्वत किसे कहते हैं?

उत्तर पुष्करार्ध द्वीप को इष्वाकार रूप से मध्य से भेद करने वाला एवं ढाई द्वीप की सीमा बतलाने वाला पर्वत तथा जिस पर्वत के आगे मनुष्यों की गति नहीं होती है और मनुष्य उसके भीतर ढाई द्वीप में ही पाये जाते हैं ऐसी सीमांकन करने वाला पर्वत मानुषोत्तर पर्वत कहलाता है।

त्रिलोक वर्णन से होता है संवेग

-आचार्यश्री आर्जवसागर

आचार्य आर्जवसागर जी ने अपने प्रवचन में कहा कि संवेग अर्थात् संसार की प्राप्ति के कारणों से भय हुए बिना हम मोक्षमार्ग की प्राप्ति में अग्रसर नहीं हो सकते। संवेग की प्राप्ति के लिए संसार (जगत्) के स्वरूप का चिंतन आवश्यक है और चतुर्गति रूप संसार/त्रिलोक के आश्रित है अतः त्रिलोक का ज्ञान किए बिना हम इस संसार में स्थित सम्पूर्ण नरक स्वर्गादिक एवं असंख्यात द्वीप-समुद्रों की स्थिति को तथा उसमें रहने वाले जीवों को नहीं जान पाते। त्रिलोक (जगत्) के स्वभाव से परिचित हो जाने से हमें उसमें रहने वाले जीवों का ज्ञान हो जाता है और उनके सुख-दुःख के कारणों को समझकर संवेग को प्राप्त कर हम लोग सांसारिक दुःखों से मुक्ति पाने हेतु धर्म एवं मोक्ष पुरुषार्थ में संलग्न होते हैं।

साभार- आर्जव वाणी

सम्यग्ज्ञान-भूषण व सिद्धान्त-भूषण पदवी हेतु त्रैमासिक धार्मिक प्रश्न-पत्र

समय : 15 दिन   अंक : 100

❖ 20 प्रश्नों में से प्रत्येक प्रश्न पर 5-5 अंक समान हैं। ❖ सभी प्रश्नों के उत्तर लाइन वाले पेपर्स पर पेरा बनाकर लिखें। ❖ उत्तर राष्ट्र-भाषा हिन्दी में ही लिखें। ❖ उत्तर लिखकर काटे जाने या घिसे जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।

प्र.1. लोक का मध्यभाग कौन-सा कहलाता है ?

प्र. 2. लोक कहाँ पर स्थित है?

प्र. 3. लोक की ऊँचाई कितनी है?

प्र. 4. सम्पूर्ण लोक को किसने बनाया?

प्र. 5. त्रसनाड़ी में त्रस जीवों से रहित स्थान कौन-कौन-सा है?

प्र. 6. त्रस नाड़ी कहाँ है और वह कितनी लम्बी, चौड़ी और ऊँची हैं?

प्र. 7. नरक और नारकी किसे कहते हैं?

प्र. 8. रत्नप्रभा नामक पृथ्वी के कितने भाग हैं?

प्र. 9. कौन-कौन-से जीव कौन-कौन-सी नरक पृथ्वियों में जन्म ले सकते हैं?

प्र.10. कौन-कौन-से जीव नरकों में जन्म नहीं लेते?

प्र.11. तीर्थंकर प्रकृति-बंध करने वाला जीव किस कारण नरक में जाता है ?

प्र.12. नरकों का वातावरण कैसा है?

प्र.13. नरकों से निकले नारकी किन-किन अवस्थाओं में पैदा नहीं होते हैं ?

प्र.14. तीर्थंकर प्रकृति बंध वाला जीव कौन-सी नरक-पृथ्वी तक जा सकता है?

प्र.15. नरक से निकला जीव कौन-से पदों को धारण नहीं कर सकता है?

प्र.16. मानुषोत्तर पर्वत किसे कहते हैं?

प्र.17. सर्व द्वीप और समुद्रों के बीच में कौन-सा द्वीप किस आकार में स्थित है?

प्र.18. तीर्थंकर के गर्भ में आने के छह माह पूर्व नरक में उसकी स्थिति क्या होती है ?

प्र.19. ढाई द्वीप किसे कहते हैं?

प्र.20. सर्व द्वीप और समुद्रों का विस्तार कितना है ?

आधार :आचार्यश्री आर्जवसागर विरचित-'**आगम-अनुयोग**', (प्रश्नोत्तर प्रदीप)

प्रश्न पत्र के पूर्व में दिये गये प्रश्नोत्तरों को पढ़कर उनका चिंतवन-मंथन कर उत्तर-पुस्तिका की पूर्ति करें।

परीक्षार्थी परिचय

नाम.. उम्र ....

पिता/माता/पति का नाम ....

पता ....

....

मोबाईल/फोन नं. ....

सम्यग्ज्ञान-भूषण एवं सिद्धांत-भूषण पदवी हेतु परीक्षार्थी के लिए नियमावली

1. उपर्युक्त पदवी हेतु परीक्षार्थी की उम्र कम-से-कम 13 वर्ष पूर्ण और अधिक-से-अधिक आंखों की दृष्टि और लेखनी के स्थिर रहने तक रहेगी।
2. परीक्षार्थी अवश्य रूप से सप्त-व्यसनों अथवा मद्य, मधु, मांस का त्यागी एवं तीर्थंकर व उनकी जिनवाणी का श्रद्धालु होना चाहिए।
3. जो महानुभाव भाव-विज्ञान पत्रिका के सदस्य हैं उन्हें परीक्षा सामग्री प्रश्नोत्तर रूप में भाव-विज्ञान पत्रिका के साथ संलग्न रूप से सतत रूप से चार वर्षों तक प्राप्त होती रहेगी।
4. चारों अनुयोगों के शास्त्रों सम्बन्धी क्रमशः प्राप्त होने वाले प्रश्नोत्तरों तथा अंत में दिये गये प्रश्न-पत्र को स्वयं पढ़कर हल करें और प्रेषित करें तथा अन्य जनों तक भी परीक्षा में भाग लेने की जानकारी अवश्य देने का पूर्ण प्रयास करें। (इस कार्य हेतु इंटरनेट का भी उपयोग कर सकते हैं।)
5. जो महानुभाव पत्रिका के सदस्य नहीं हैं उन्हें प्रश्नोत्तर रूप सामग्री प्राप्त करने हेतु डाक व्यय का भुगतान स्वतः करना होगा।
6. परीक्षार्थी के लिए यह आवश्यक होगा कि वे प्रश्नोत्तरी व प्रश्नपत्र पाते ही एक माह के अन्तर्गत साफ-सुथरे रजिस्टर के पेपर्स पर पूर्ण शुद्धता और विनयपूर्वक उत्तर लिखकर निम्नलिखित पते पर भेजने का उपक्रम करें।
7. उत्तर पुस्तिका पर अंक (नम्बर) देने का भाव उत्तर-पुस्तिका में वर्णित उत्तरों की शुद्धता और लिखावट आदि पर निर्भर करेगा।
8. परीक्षार्थी से ऑनलाइन या फोन द्वारा उत्तर पूछने की पहल भी की जा सकती है अतः अपने पते के साथ ई-मेल एड्रेस या मोबाईल/फोन नं. अवश्य लिखें।
9. उत्तर लिखकर काट दिये जाने पर या घिस दिये जाने पर अंक नहीं दिये जावेंगे।
10. परीक्षार्थी प्रश्नों के उत्तर स्वतः अपनी लिखावट में ही लिखें, अन्य किसी के नाम से उत्तर पुस्तिका भरकर प्रेषित किये जाने पर हमारे परीक्षा बोर्ड द्वारा उसे पदवी हेतु मान्य नहीं किया जावेगा।
11. कदाचित् किसी भव्य द्वारा किसी विशेष परिस्थिति में परीक्षा न दे सकने के कारण और उनके आग्रह किये जाने पर उन्हें प्रश्नोत्तरी व प्रश्नपत्र उपलब्ध कराये जाने की व्यवस्था परीक्षा-बोर्ड द्वारा की जा सकेगी।
12. सम्यग्ज्ञानभूषण एवं सिद्धांतभूषण पदवी सम्बन्धी उत्तीर्णता प्राप्त करने वाले भव्य गणों को भगवान महावीर आचरण संस्था समिति के द्वारा दो या चार वर्षों में प्रमाण पत्र सह सम्मानित किया जावेगा।
13. प्रश्नोत्तरी व प्रश्न-पत्र मंगवाने हेतु परीक्षा-बोर्ड के निम्न लिखित पदवीधारी से सम्पर्क करें:-

भाव-विज्ञान पत्रिका के	भ. महावीर आचरण संस्था	भ.महावीर आचरण संस्था
प्रधान सम्पादक	समिति के मंत्री	समिति के अध्यक्ष
डॉ. अजित जैन	श्री राजेन्द्र जैन	श्री महेन्द्र जैन
मो.7222963457	मो.7049004653	मो.7999246837

14. उत्तर पुस्तिका डाक/पोस्ट से निम्न पते पर प्रेषित करें:-
सम्पादक, भाव-विज्ञान, एम आई-जी 8/4, गीतांजली कॉम्पलेक्स,
कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल 462003 (म.प्र.)

प्रागैतिहासिक-प्राग्वैदिक जैन धर्म और उसके सिद्धान्त

-श्रीनाथूलालजी जैन शास्त्री

आधुनिक इतिहास द्वारा

ई. अठारहवीं शती के लगभग ग्रीक और रोम के प्राचीन साहित्य के पाश्चात्य विद्वानों ने प्राचीन भाषाओं का अध्ययन प्रारम्भ किया तो उन्हें संस्कृत भाषा के शब्द और प्रत्यय, ग्रीक और लेटिन भाषा के संबंध में अन्वेषण करने पर तुलनात्मक भाषा विज्ञान द्वारा ऐतिहासिक अनुसंधान की दिशा मिली। उसके परिणाम स्वरूप ऋग्वेद विश्व की प्राचीनतम पुस्तक और ज्ञानविज्ञान का भंडार बतलाया गया।

वैदिक साहित्य का परिचय मिलने पर पाश्चात्य विद्वान बौद्ध और जैन साहित्य के संपर्क में आए। उन्होंने ऐतिहासिक पद्धति द्वारा प्राप्त साधनों से इन धर्मों की खोज की। युरोप में उस समय जैन धर्म के ग्रन्थों के उपलब्ध न हो सकने से विद्वानों में विचारभेद हो गया जिसे डॉ. बुहलर ने अपनी पुस्तक (ई.से. जै.पृ. 23) में प्रकट किया। पीछे खोजों के फलस्वरूप डॉ. याकोवी एवं डॉ. बुहलर आदि विद्वानों ने जर्मन विद्वानों के सहयोग से जैनधर्म न केवल बौद्धधर्म के मान्य विद्वान श्री रे.डे. विडस (बु.ई.पृ.143) ने भी स्वीकार किया है कि भारत के सम्पूर्ण इतिहास में बौद्धधर्म के उत्थान से लगाकर आज तक जैन लोग एक व्यवस्थित समाज के रूप में रहते आए हैं।

डॉ. याकोबी जैनधर्म को बौद्धधर्म से प्राचीन प्रमाणित करके ही चुप नहीं बैठे, उन्होंने बुद्ध से 250 वर्ष पूर्व होने वाले भगवान पार्श्वनाथ को भी ऐतिहासिक पुरुष प्रमाणित किया और इसको ऐतिहासिक व्यक्तियों ने सादर स्वीकार किया। उड़ीसा की हाथी गुफा से प्राप्त खारवेल का शिलालेख भी इसका समर्थक हैं।

श्री जायसवाल ने नागरी प्रचारिणी पत्रिका भाग 8, अंक 4, पृ. 301 में प्रकाशित कराया था कि पूर्व समस्त शिलालेखों में जैनधर्म का यह सबसे प्राचीन शिलालेख है। इससे ज्ञात होता है कि पटना के नंद के समय में उड़ीसा (कलिंगदेश) में जैनधर्म का प्रचार था और जिनेन्द्र की मूर्ति की पूजा होती थी। वृषभदेव की मूर्ति को नंद उड़ीसा से पटना ले आया था। वह मूर्ति प्रथम तीर्थंकर की कलिंग जिन के नाम से प्रसिद्ध थी। जब खारवेल ने मगध पर चढ़ाई की तो वह उस मूर्ति को भी वहाँ से वापस ले आया था। ईसवी सन् से 458 वर्ष पहले और विक्रम संवत् से 400 वर्ष पूर्व उड़ीसा में जैनधर्म का प्रचार था।

पूर्वकालीन स्थिति

सूर्यवंशोत्पन्न अयोध्या पति श्री रामचन्द्र मुनिसुव्रत बीसवें तीर्थंकर के काल में दोनों संस्कृतियों के समन्वय करने वाले महान पुरुष हुए। जिनके कारण भारतीय संस्कृति का प्रकाश दक्षिण देश में पहुँचा। वेदों में 'मुनयोवातरशना' के रूप में दिगम्बर मुनियों का उल्लेख मिलता है। वैदिक आर्य श्रमणोपासक पूर्वी आर्यों को व्रात्य कहते थे। अथर्ववेद में व्रात्यस्ताये के रूप में उनकी स्तुति की गई है।

तेईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ श्रीकृष्ण के चचेरे भ्राता थे। जरासंध के आतंक से यदुवंशियों को शैरीपुर

छोड़कर द्वारका में रहना पड़ा। महाभारत के युद्ध के पूर्व वैदिक आर्यों का प्रभाव बहुत बढ़ा हुआ था। इस युग में वैदिक क्षत्रियों की राजनैतिक शक्ति सर्वोपरि थी। इस युग के अंत में श्रीराम के समान ही यदुवंशी श्रीकृष्ण ने भी वैसी ही श्रमण और वैदिक दोनों संस्कृतियों के समन्वय का स्तुत्य प्रयत्न किया उनका दोनों परंपराओं में सम्मान रहा। तीर्थंकर अरिष्टनेमि का यजुर्वेद में स्मरण किया गया है। जैन परम्परा में श्रीकृष्ण नारायण, अर्धचक्रवर्ती, त्रिखंडाधिपति माने गये हैं। पांडव गण भी जैन धर्मोपासक और अंत में तपकर के पूर्व तीन मुक्ति को और अंत के दो सर्वार्थसिद्धि को प्राप्त हुए बतलाये गये हैं।

महाभारत युद्ध से वैदिक क्षत्रियों की राजसत्ता अवनत होकर उसका अंत सा हो गया।

प्रो. जयचंद्र विद्यालंकार-

का कथन है कि भारत का प्राचीन इतिहास जितना वेदों को मान्य करने वालों का है उतना ही वेद विरोधी जैनों का है। जैनों के प्राचीन तीर्थंकर भी वैसे ही वास्तविक ऐतिहासिक पुरुष हैं जैसे कि वेदों के रचयिता ऋषिगण तथा ब्राह्मण परम्परा के अन्य प्राचीन महापुरुष।

श्रमण संस्कृति शुद्ध भारतीय प्राचीन मानव संस्कृति है जो वैदिक धर्म और ब्राह्मण संस्कृति के उदय के संभवतया कुछ पूर्व ही अस्तित्व में आ चुकी थी और विकसित हो चुकी थी। ब्राह्मण-वैदिक संस्कृति के उदय के उपरान्त वह (श्रमणसंस्कृति) उसके साथ संघर्ष करती, समन्वय करती, आदान-प्रदान करती तथा अपनी सत्ता बनाये रखती हुई विकसित होती रही। (भा. इति. एक दृष्टि प्र.अ.) वर्तमान इतिहासकार अब भारतवर्ष का नियमित इतिहास महाभारत युद्ध के बाद से मानने लगे हैं। इसका प्राचीन युग महाभारत युद्ध से लेकर मुसलमानों द्वारा भारत की विजय के साथ समाप्त होता है। इस ढाईसहस्र वर्ष के दीर्घ प्राचीन युग का पूर्वार्ध उत्तर भारत के इतिहास से संबंधित है।

प्रो. पार्जीटर के अनुसार-

महाभारत की तिथि ई.पूर्व 950 है। डॉ. काशीप्रसाद जायसवाल ई. पूर्व 1450, जयचन्द्र विद्यालंकार के अनुसार 1424 किन्तु बहुमत 15वीं शताब्दी ई.पूर्व के लगभग हुआ मानता है।

इस घटना के बाद अर्जुन पौत्र परीक्षित हस्तिनापुर साम्राज्य का अधिपति हुआ। इस प्रकार ई.पूर्व 1400 के लगभग भारतीय इतिहास का प्रारंभ माना जाता है। यही काल कलियुग के प्रारम्भ का प्रारम्भ का ब्राह्मण परम्परा मानती है। जब श्रीकृष्ण की ऐतिहासिकता में कोई संदेह नहीं किया जाता तो उनके चचेरे भ्राता तीर्थंकर अरिष्टनेमि को ऐतिहासिक व्यक्ति मानने में कोई कारण नहीं रहता।

प्रसिद्ध कोषकार डॉ. नगेन्द्रनाथ बसु, पुरातत्वज्ञ, डॉ. फुहरर, प्रो. बारनेट, कर्नलटाड, मि. कर्वा, डॉ. हरिसत्य भट्टाचार्य, डॉ. प्राणनाथ विद्यालंकार, डॉ. राधाकृष्णन आदि अनेक प्रामाणिक विद्वान नेमिनाथ की ऐतिहासिकता में संदेह नहीं करते। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, ऐतरेव ब्राह्मण, यास्क, निरुक्त,

वेदार्थदीपिका, सायणभाष्य, महाभारत, स्कंद पुराण एवं मार्कण्डेय पुराण, आदि प्राचीन ग्रन्थों में उनके उल्लेख हैं।

कर्नल टाड अपने-

'राजस्थान' में लिखते हैं कि ''मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में चार बुद्ध या मेधावी पुरुष हुए उनमें प्रथम ऋषभदेव एवं द्वितीय नेमिनाथ थे''।

डॉ. फुहरर-

एपी प्रेफिका इंडिका व्हाल्यूम-2 पृ. 206-207 में लिखते हैं- जैनधर्म के 22 वें तीर्थंकर नेमिनाथ ऐतिहासिक पुरुष माने गये हैं। भगवद् गीता के परिशिष्ट में श्री वरवे इसे स्वीकार करते हैं कि नेमिनाथ श्रीकृष्ण के भाई थे। वे जैनियों के 22 वे तीर्थंकर श्रीकृष्ण के समकालीन थे। तो शेष इक्कीस तीर्थंकर श्रीकृष्ण के कितने वर्ष पहले होने चाहिए यह पाठक अनुमान कर सकते हैं। नेमिनाथ के पश्चात् तेईसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ जो काशी के राजकुमार थे, जिनके वंश में सम्राट् ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती हुआ था।

डॉ. राय चौधरी-

के अनुसार काशी के ये राजे वैदिकधर्म एवं यज्ञों के विरोधी थे। बौद्ध अनुश्रुति पार्श्व पिता अश्वसेन थे। महाभारत में अश्वसेन नागनरेश का उल्लेख मिलता है। पार्श्वनाथ का जन्म ई.पूर्व 847 में हुआ था।

डॉ. जार्ल चार पेंटियर के अनुसार-

'जैनधर्म के मूल सिद्धांतों के प्रमुखतत्त्व महावीर के बहुत पूर्व पार्श्वनाथ के समय से ही व्यवस्थित रहे आये प्रतीत होते हैं।'

प्रो. हार्सबर्थ-

के अनुसार गौतमबुद्ध के समय से पूर्व ही पार्श्वनाथ द्वारा स्थापित जैनसंघ, जो निर्ग्रंथ संघ कहलाता था, एक विधिवत् सुसंगठित धार्मिक संप्रदाय था।

प्रो. जयचन्द्र विद्यालंकार का कथन है-

अथर्ववेद में जिन व्रात्यों उल्लेख है वे अर्हन्तों और चैत्यों के उपासक थे। वे अर्हंत और उनके चैत्य बुद्ध के समय के बहुत पहले से विद्यमान थे। **डॉ. विमल चरण लाहा** कहते हैं कि ''महावीर के उदय के पूर्व भी यह धर्म जिसके कि वे अंतिम उपदेशक थे, वैशाली तथा उसके आसपास के प्रदेशों में अपने किसी पूर्व रूप में प्रचलित रहता रहा प्रतीत होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि कम से कम उत्तरी एवं पूर्वी भारत के कितने ही क्षत्रिय जन, जिनमें कि वैशाली निवासियों की प्रभुसत्ता थी, पार्श्वनाथ द्वारा स्थापित एवं प्रचलित धर्म के अनुयायी थे। आचारांग सूत्र आदि से पता चलता है कि महावीर के माता-पिता पार्श्व के उपासक एवं श्रमणों के अनुयायी थे।''

बुद्ध के शरीरांत की तिथि का बहुमान्य मत ई.पू. 483 है। तीस वर्ष की आयु में उन्होंने गृहत्याग

किया, उसके छहवर्ष बाद उन्हें बोधि प्राप्त हुई। जीवन के शेष 44 वर्ष धर्म प्रचार किया। वज्जिसंघ नामक गणतंत्र के अंतर्गत क्षत्रिय कुंडग्राम के कश्यप गोत्री क्षत्रिय नेता सिद्धार्थ की पत्नी त्रिशला देवी से वर्धमान महावीर का जन्म हुआ। चैत्रशुक्ला 13, 30 मार्च सन् 599 ई.पू. का समय था। वज्जिसंघ के अध्यक्ष वैशाली के लिच्छवी शासक चेटक महावीर के मातामह (नाना) थे। महाराज चेटक के दस पुत्र थे। ज्येष्ठ पुत्र सिंहरत जो बज्जिसंघ के सेनापति थे। महाराज चेटक की सात पुत्रियां थी। चेलना श्रेणिक (विंवसार) मगध नरेश के साथ विवाही थी। दूसरी कौशांबी नरेश शतानीक के साथ। तीसरी दशार्ण के राजा दशरथ के साथ, चौथी सिंधुराज सौवी के साथ, महाराज उदयन के साथ पांचवी, अंत की दो ज्येष्टा और चंदना बाल ब्रह्मचारिणी रही। वैशाख शुक्ला 10 (26 अप्रैल ई.पू. 557) को महावीर केवलज्ञानी हुए।

इन्द्रभूति (गौतम) अग्निभूति, वायुभूति, आर्यव्यक्त, सुधर्म, मौंडिकपुत्र, मौर्यपुत्र, अकंपित, अचल, मैत्रेय, प्रभास ये ग्यारह ब्राह्मण गणधर थे। कार्तिक कृष्णा 30 मंगलवार 15 अक्टुबर ई.पू. 527 या विक्रम पूर्व 470 तथा शक पूर्व 605 के प्रात: (चतुर्दशी के अंत) सूर्योदय के पूर्व मध्यम पावा में श्री महावीर का निर्वाण हुआ।

'संस्कृति के चार अध्याय' में श्री रामधारीसिंह दिनकर, पंचसंस्करण, पृष्ठ 130 पर लिखते हैं-

''जैन धर्म का अहिंसावाद वेदों से निकला है, ऐसा सोचने का कारण यह है कि ऋषभदेव और अरिष्टनेमि जैनमार्ग के इन दो प्रवर्तक का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। जैनधर्म के पहले तीर्थंकर भी ऋषभदेव हैं। उनकी कथा विष्णुपुराण और भागवत पुराण में आती है, जहाँ उन्हें महायोगी, योगेश्वर और योग तथा तप मार्ग का प्रवर्तक कहा गया है।

इन दोनों पुराणों का यह भी कहना है कि दशावतार के पूर्व होने वाले अवतारों में से एक अवतार ऋषभदेव भी हैं। इससे यह पता चलता है कि वेदों के गार्हस्थ्य प्रधान युग थे वैराग्य, अहिंसा और तपस्या के द्वारा धर्मपालन करने वाले जो अनेक ऋषि थे, उनमें श्री ऋषभदेव का अन्यतम स्थान था और उनकी परम्परा में भी लोग अहिंसा तथा तपश्चर्या के मार्ग पर बढ़ते रहे। उन्होंने जैनधर्म का पथ प्रशस्त किया।'' संस्कृति की चार अध्याय के प्रारम्भ में **जवाहरलाल जी नेहरु की प्रस्तावना** है। अनेक मतों के कथन करते हुए सारभूत बात यह पढ़ने में आई कि द्रविड़ और आर्य इसी देश के मूल निवासी थे। यह इसलिए कि आर्यों का मूल अभिजन रूस के दक्षिण में था और यही से आर्यों की कुछ शाखायें पश्चिम की ओर यूरोप पहुँच गई और कुछ शाखाएं ईरान चली गई। उस समय न तो देश बने थे, न मानवों की टोलियाँ एक भाग से दूसरे भाग तक दौड़कर जाती थी। दक्षिणी रूस से ईरान अफगानिस्तान तक जाने में उन्हें कई सौ वर्ष लगें होंगे। ईरान से भारत आने में भी शताब्दियाँ लगी होंगी। इसलिए भारत को आर्यों ने अपने लिए नया देश नहीं समझा तो इसमें आश्चर्य नहीं। जब आर्य ईरान में थे, उस समय संस्कृत और इरानी दो नहीं भाषा एक ही थी। (पृ. 23) आर्य ईरान से पंजाब तीन हजार वर्ष पहले पहुँच चुके थे। वेदों की रचना कदाचित् उसके बाद की है। किन्तु अपनी सभ्यता का विकास वे पहले कर चुके थे। हम इस निष्कर्ष से भाग नहीं सकते कि मोहनजोदड़ो की सभ्यता आर्य भिन्न सभ्यता थी।

संस्कृत भाषा भारत के आर्यों के साथ आई। आर्य शब्द की व्युत्पत्ति ऋ-गति के अर्थ के कारण आर्य गत्वर (गयन करने वाले) थे। ये एशिया के रेगिस्तानी इलाकों से भारत पहुँचे। भारत में काश्मीर, पश्चिोत्तरभारत और पंजाब ये उनके पौरुष की क्रीड़ा क्षेत्र थे। वहीं रहकर उन्होंने भारत की संस्कृति का निर्माण किया।

डॉ. मंगलदेव शास्त्री ने लिखा है कि-

"बहुत से विद्वानों को भी पर जानकार आश्चर्य होगा कि वैदिक संहिताओं में मुक्ति, मोक्ष अथवा दु:ख शब्द का प्रयोग एक बार भी हमको नहीं मिला। नरक शब्द ऋग्वेद संहिता, शुक्ल यजुर्वेद माध्यंदिन संहिता तथा सामसंहिता में एक बार भी नहीं आया है। अथर्ववेद संहिता में नरक शब्द केवल एक बार प्रयुक्त हुआ है।"

"आर्यों के प्राचीन साहित्य में निवृत्ति विरोधी विचार इतने प्रबल है कि निवृत्तिवादी दृष्टिकोण को आर्येतर माने बिना चल नहीं सकता। इसी प्रकार ऋषि और मुनि शब्दों का युग्म भी विचारणीय है। ऋषि शब्द का मौलिक अर्थ मंत्रदृष्टा है। वैदिक आर्य गृहस्थ होते थे और सामिष आहार से उन्हें परहेज नहीं था।

मुनि गृहस्थ नहीं होते थे। पुराणों में ऋषि और मुनि के प्राय: पर्यायवाची होने का एक कारण पुराणों का आचार वैदिक और प्राग्वैदिक संस्कृतियों का समन्वित रूप हैं। जब बौद्ध और जैन आंदोलन खड़े हुए, बौद्धों और जैनों ने प्रधानता ऋषि शब्द को नहीं, मुनि शब्द को दी। इसमें भी यही अनुमान दृढ़ होता है कि मुनि परम्परा प्राग्वैदिक रही होगी। इस अनुमान की पुष्टि इस बात से भी होती है कि मोहनजोदड़ो की खुदाई में योग के प्रमाण मिले हैं और जैनमार्ग के आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव थे, जिनके नाम, योग और वैराग्य की परम्परा उसी प्रकार लिपटी हुई है, जैसे कालांतर में वह शिव के साथ समन्वित हो गई।"

डॉ. राधाकृष्णान का कथन है-

"इस विषय के प्रमाण है कि ईसवी सन् के एक शताब्दी पूर्व लोग प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव की पूजा करते थे। इसमें कोई संदेह नहीं है कि वर्धमान और पार्श्वनाथ के पूर्व में भी जैनधर्म विद्यमान था। यजुर्वेद में ऋषभदेव, अजितनाथ तथा अरिष्ट नेमि इन तीन तीर्थंकरों का उल्लेख पाया जाता है। भागवत पुराण से, ऋषभदेव जैनधर्म के संस्थापक थे, इस विचार का समर्थन होता है।"

हिन्दी अनुवाद- इण्डियन फिलोसफी पेज1-2-7-8

श्री विनोवाभावे लिखते हैं-

"जैन विचार नि:संशय प्राचीन काल से है, क्योंकि 'अर्हन् इंददयसे विश्व मम्बम्' इत्यादि वेद वचनों में यह पाया जाना है। इस पंक्ति का अर्थ वेद के व्याख्याकार सायण के शब्दों में यह है- हे अर्हन् तुम इस विशाल विश्व की रक्षा करते हो। इस वाक्य का भाव भी जैनों के मूलभूत जीवदया अहिंसा सिद्धांत के अनुकूल है।"

सर षण्मुखं चेट्टी-

ने मद्रास में महावीर जयंती पर अपने व्याख्यान में कहा था कि "आर्य लोग भारत में बाहर से आए

थे। उस समय भारत में जो द्रविड़ लोग रहते थे उनका धर्म जैनधर्म ही था। अत: प्रमाणित होता है कि भारत वर्ष के आदि निवासी जैनधर्म के आराधक रहे हैं।''

(केन्द्रीय धारा सभा के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री चेट्टी के भाषण से)

डॉ. ए.गिरनार ने लिखा है-

''जैनधर्म में मनुष्य की उन्नत्ति के लिए सदाचार को अधिक महत्व प्रदान किया गया है। जैनधर्म अधिक मौलिक, स्वतंत्र तथा सुव्यवस्थित है।''

डॉ. जिमर-

जैनधर्म को आर्यों का पूर्ववर्ती धर्म कहते हैं। जैनधर्म प्राग्वैदिक है(फिलोसफीज ऑफ इंडिया पेज 60)

फरलांग साहब-

इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि ''जैनधर्म के प्रारंभ को जानना असंभव है।''

मद्रास हाईकोर्ट के स्थानापन्न **प्रधान न्यायधीश श्री कुमार स्वामी** ने लिखा है- ''आधुनिक शोध ने यह प्रमाणित कर दिया है कि जैन धर्म हिन्दू धर्म से मतभिन्नता धारण करने वाला उपभेद नहीं है। जैनधर्म का उद्‌भव एवं इतिहास उन स्मृति शास्त्रों तथा उनकी टीकाओं से बहुत प्राचीन है जो हिन्दू कानून और रिवाज के लिए प्रामाणिक मानी जाती है।''

(मद्रास हाईकोर्ट ए.एलन.आर. 1927 मद्रास 228)

मुंबई हाइकोर्ट के न्यायमूर्ति रांगलेकर-

का यह निर्णय महत्वपूर्ण है- ''आधुनिक ऐतिहासिक शोध से यह प्रकट हुआ है कि यथार्थ में ब्राह्मण धर्म के सद्‌भाव अथवा उसके हिन्दूधर्म के रूप में परिवर्तित न होने के बहुत पूर्व जैनधर्म इस देश में विद्यमान था। यह सत्य है कि देश में बहुसंख्यक हिन्दुओं के संपर्कवश जैनियों में ब्राह्मण धर्म से संबंधित अनेक रीतिरिवाज प्रचलित हो गये हैं''

(ब्रिडे संप्रति पृ. 335)

डॉ. हरिसत्य भट्टाचार्य एम.ए. ने-

'भगवान अरिष्टनेमि नामक अंग्रेजी पुस्तक के पृष्ठ 88-89 में भगवान नेमिनाथ को ऐतिहासिक महापुरुष स्वीकार किया है। यदि महाभारत के प्रमुख श्रीकृष्ण इतिहास की भाषा में अस्तित्व रखते हैं, तो उनके चचेरे भाई परम दयालु भगवान नेमिनाथ को कौन सहृदय ऐतिहासिक विभूति न मानेगा। जिनके निर्वाण स्थल रूप में ऊर्जयन्त गिरि पूजा जाता है।

डॉ. टी.के. लड्डू का कथन है-

''महावीर स्वामी के पूर्व जैनधर्म के इतिहास की विश्वसनीय खोज नहीं की जा सकती। परन्तु वह बौद्धधर्म से प्राचीन है। इसका व्यवस्थापक कोई अन्य व्यक्ति था। चाहे भगवान पार्श्वनाथ हों अथवा अन्य

तीर्थकर हों जो महावीर स्वामी के पूर्व विद्यमान रहे हों।''

भागवत में-

ऋषभदेव विष्णु के नवम (9वें) अवतार माने गये हैं पर अवतार वामन, राम, कृष्ण और बुद्ध के पहले हुआ है। जब 15 वें वामन अवतार का उल्लेख ऋग्वेद में है तो यह अवतार वेदमंत्र में प्राचीन ठहरा और ऋषभदेव वामन अवतार से प्राचीन है अत: यह सिद्ध है कि ऋषभदेव द्वारा प्रतिपादित धर्म जैनधर्म भी प्राचीन है।

(मूललेखक अंग्रेजी सी.आर.दास बैरिस्टर की पुस्तक- जैन धर्म की प्राचीनता के ज्वलंत प्रमाण अनुवादक श्री कामताप्रसाद जी- सनातन जैनधर्म पृ.19)

उक्त पुस्तक पृष्ठ 14 पर डॉ. विल्सन लिखते हैं-

आर्य लोग उठाऊ चूल्हे नहीं थे, बल्कि उनके और शत्रुओं के भी घर ग्राम और शहर थे। उनके घरों में हर तरह की जीवन की सामग्री रहती थी। वे कातकर और बुनकर कपड़े पहनते थे। वे लोहे का भी व्यवहार करते थे। उनमें लुहार, सुनार, बढ़ई आदि शिल्पकार थे। वे कुल्हाड़ियों से जंगल के वृक्ष काटते थे और अपनी गाड़ियों को चिकनी बनाने के लिए रंदा भी चलाते थे। युद्ध संबंधी वस्तुओं में उनके पास कवच, गदा, धनुष, बाण, बरछी, तलवार, और ढालें थी। वे शंख से रणभेरी का काम लेते थे। उन्होंने अपने घरेलू व्यवहार और देवों की पूजा के लिए कटोरे, कलशे, चमचें आदि बनाये थे। उस समय और क्रिया हेतु नाई भी थे। वे जवाहरातों का मूल्य जानते थे। उनके पास सोने की थालियाँ, कटोरे और जवाहरात की मालायें थी। युद्धार्थ रथ, घोड़े और बैलगाड़ियाँ थी।

उस समय युद्ध में सवारी के लिए घोड़े और उनके सईस भी थे। उनमें हिजड़े भी थे। उन्होंने छोटी-छोटी नाव और जहाज भी बनाये थे। वे अपने घरों से दूर देशांतरों में जाकर व्यापार भी किया करते थे। कहीं-कहीं वेदमंत्रों में उन समुद्रों का उल्लेख है जहाँ सिंधुनदी द्वारा पहुँचे होंगे। धनके लोभी मनुष्यों को समुद्र यात्रा में एकत्रित होना लिखा है। एक जहाज के दूर जाने का भी उल्लेख है। आर्य लोग मन बहलाने के लिए नाचना गाना भी जानते थे। वेदों में मृदंग का भी वर्णन है और अर्थवेद में तो खासकर एक मंत्र मृदंग के लिए निर्मित है। जिस समय वेदों की रचना हुई उस समय के आर्य उपर्युक्त प्रकार के थे।

एक यूरोपीय विद्वान के अनुसार आर्यों की मुख्य जीविका संग्राम और कृषि थी। जिन्होंने रणक्षेत्र में वीरता दर्शायी, वे धीरे-धीरे मुख्य व्यक्ति क्षत्रिय बन गये और उनके सरदार राजा कहलाने लगे और जिन्होंने रणक्षेत्र में भाग नहीं लिया वे वैश्य कहलाने लगे। हाँ उन्हें तभी असभ्य कह सकते हैं, जब हम उनकी उपर्युक्त कृतियों से आँखमीच लें। तो अब भला अग्नि, इन्द्र आदि की पूजाओं के मंत्र आदि ऋग्वेद में किस अभिप्राय से लिखे गये हैं? यह तो नितांत असंभव है कि वेदानुसार वर्णित उपर्युक्त प्रकार के हिन्दुओं में इतना भी ज्ञान न हो कि एक शक्ति जिसको वे स्वत: उत्पन्न कर सकते थे, उससे भयभीत हो उसकी स्तुति रूप में इतने बड़े मंत्रों के संग्रह बना डाले। परन्तु यथार्थ में वैदिक देवता प्राकृतिक शक्तियाँ नहीं है। वे जीव की ही आत्मिक शक्तियाँ है।

आत्मा की स्तुति रूप में मंत्रों को गाना याने आत्मा को कर्मजनित मोहावस्था से जगाना ही है (पृ.16) इस कारण ऋग्वेद के ऋषि, कवियों ने आत्मा मुख्य शक्तियों की भाव रूप में स्तुति की है। जिसका फल यह है कि वे मनुष्य उनके यथार्थ भाव को समझ कर आत्मिक शक्तियों के रूप में अभिज्ञ (जानकार) हो जावे। इन सब उपर्युक्त अनुमानों से उन ऋषियों के आत्मज्ञान का पता चल जाता है और वैदिक समय के उन आर्यों का भी। परन्तु जब उन ऋषियों के आत्मज्ञान पर ध्यान देते हैं तब उनका ज्ञान वैज्ञानिक ढंग पर होना आवश्यक है।

वह यथार्थ ज्ञान सिवा जैनधर्म के कहाँ पाया जा सकता है? क्योंकि जैनधर्म भारत वर्ष में प्राचीनता में द्वितीय माना जाता है। सारांश है कि ऋग्वेद के मंत्रों का आधार जैन सिद्धांत ही है। परन्तु उक्त ऋषियों ने जीवन के छोटे-मोटे कार्यों और जीवन की आत्मिक शक्तियों को देवी-देवताओं के रूप में परिणत कर दिया है। आवागमन का सिद्धांत वेदकर्ताओं को अवश्य विदित था। कारण ऋग्वेद में उन्होंने जीव का जल और वनस्पति आदि में जन्म लेना लिखा है।

(इंडियन पेथोलॉजी एण्ड लेगेंड पेज 116)

वेदों के प्राचीन वृत्तिकार यास्क के अनुसार वेदों के तीन मुख्य देवता 1. अग्नि, जिसका स्थान पृथ्वी पर है, 2. वायु या इन्द्र, जिसका स्थान हवा में है। 3. सूर्य, जिसका स्थान आकाश में है, मान लिया जावे तो प्रत्यक्ष रूप में विदित है कि इनके कितने ही रूपांतर विरोध वश किये गये हैं। (दी हिन्दू माइथोलॉजी पेज 9) हमने इन्द्र का स्वरूप (की ऑप नालेज) में वर्णन किया है। परन्तु सूर्य केवल ज्ञानरूप है और अग्नितप रूप है। इस प्रकार वेदों के तीन मुख्य देवता आत्मा के भावों के रूप में है। सूर्य आत्मा की स्वाभाविक अवस्था दर्शाता है। इन्द्र उसे वैज्ञानिक सुख अनुभव करने में प्रश्रय देता है और अग्नि तप द्वारा प्राप्त हुए कर्म क्षय कारक गुणों के रूप मे उपस्थित है।

भारतीय इतिहास में जैनकाल

उक्त शीर्षक के कतिपय उल्लेखों द्वारा श्री कामता प्रसाद जी एम.आर.ए.एस., डी.एल. पूर्व संचालक अखिल विश्व जैन मिशन, अलीगंज ने लिखा है कि अब भारतीय इतिहास का प्रारंभ शिशु नागवंश से भी पहले पहुँच जाता है क्योंकि सिंधु उपत्यका और नर्मदा तट से उपलब्ध पुरातत्व, ईस्वी सन् से लगभग चार पाँच हजार वर्षों पुरानी घटनाओं का परिचय कराता है।

मोहनजोदड़ो और हडप्पा का पुरातत्व इस बात की साक्षी उपस्थित करता है कि उस प्राचीन काल में वैदिक संस्कृति सिंधु उपत्यका, सौराष्ट्र और नर्मदा प्रदेश में प्रचलित थी। वह संस्कृति योगाचार निरत संतों द्वारा अनुप्राणित हुई थी। वैदिक संस्कृति की परम्परा के समकक्ष में जो दूसरी सांस्कृति परम्परा इस देश में प्राचीन काल से प्रचलित मिलती है, वह श्रमण परम्परा है इस श्रमण परम्परा का प्रतिनिधित्व आज यद्यपि जैन और बौद्ध दोनों ही करते हैं, परन्तु इनमें बौद्ध से जैन प्राचीन है। मोहनजोदड़ो के पुरातत्व से यह स्पष्ट है कि वह वैदिक मान्यताओं से अछूता और निराला था। वैदिक ऋषियों ने योगियों की पूजा करने का न तो विधान ही किया और न ही कभी मूर्तियों बनाई।

इसके विपरीत श्रमण परम्पराओं में केवल जैन संस्कृति में ही हमको योगनिष्ठ साधुओं की पूजा का विधान मिलता है और जैनयोगियों-पंचपरमेष्ठियों की मूर्तियाँ बनाकर उनकी पूजा प्राचीन काल से करते आए हैं। श्री सोमदेव सूरि और जिनप्रभ सूरि ने मथुरा में भगवान सुपार्श्व की मूर्ति और स्तूप बनाने का उल्लेख किया है। उसकी पुष्टि कंकाली टीले से उपलब्ध बौद्ध स्तूप के लेख से होती है। मूलत: वह भगवान पार्श्वनाथ के समय में बनाया गया था। इसी प्रकार राजा करकंडु द्वारा निर्मापित गुफा मंदिरों और मूर्तियों का अस्तित्व तेरापुर में आज भी मिल रहा है। इन मूर्तियों का निर्माणकाल ईस्वी सन् से पहले आठवीं शताब्दी तक पहुँचता है, उपरान्त सम्राट् खारवेल के हाथी गुफा वाले शिलालेख से भी स्पष्ट है कि जिन मूर्तियाँ नन्द राजाओं के बहुत पहले से निर्माण की जाने लगी थी।

कोई विद्वान तीर्थंकरों की बड़ी-बड़ी आयु काल का वर्णन पुराणों में पढ़कर उन्हें काल्पनिक कहने लगते हैं। प्राणी शास्त्र विदों का यह मत है पूर्वकाल में प्राणियों की आयुकाय उत्तरोत्तर बड़ी-चढ़ी थी। ऐसे-ऐसे अस्थिपंजर मिले हैं, जिनकी तुलना आज के किसी भी जीवजन्तु से नहीं की जा सकती। जैन पुराणकारों ने प्राणी शास्त्र के इस वैज्ञानिक नियमानुकूल तीर्थंकरों की आयुकाय का विशेष वर्णन किया तो वह ठीक ही है। तीर्थंकरों की नियत संख्या 24 और वह इस कारण कि एक कल्पकाल में ज्योति मंडल की चक्रगति से सर्वोत्कृष्ट कालयोग 24 ही आकर पड़ते हैं जिनमें धर्म चक्रवर्तियों का जन्म होता है। प्रत्येक तीर्थंकर के काल की घटनाओं को जानकर उनके अस्तित्व का निर्णय किया जा सकता है। अधुना विद्वानों का यह मत है कि वैदिक आर्य मध्य एशिया से आकर भारत में बसे थे। उनके मुख्य देवता इन्द्र, वरूण, मरुत आदि थे। वेवीलोनिया की संस्कृति में भी इन्द्र, वरुण, मरुत की मान्यता का प्रावल्य था। संभवत: मूल में वैदिक सांस्कृतिक उद्गम इस वेवीलोनिया संस्कृति से हुआ है। ऐसा भी अनुमान किया जाता है नि:संदेह भारतीय पुरातत्व से यह स्पष्ट है कि इन वैदिक आर्यों के आगमन के बहुत पहले से भारत में एक सुसंस्कृति अध्यात्मवादी समाज का अस्तित्व था। विद्वज्जन उसको द्रविड़ अथवा सुमेर या सुजाति का अनुमान करते हैं और मोहनजोदड़ो के निर्माता भी ये ही द्रविड़ और सुलोग माने गये हैं।

सौभाग्य वश इन दोनों जातियों के लोगों का संपर्क भी जैनधर्म से मिलता है। सुलोगों का आवास स्थान आज भी सौराष्ट्र कहलाता है जो जैनियों का प्रमुख क्षेत्र है। प्राचीनकाल में सुराष्ट्र के जैन लोग वेवीलोनिया गये और वहाँ उन्होंने जैन संस्कृति का प्राचार किया था। काठियावाड़ (सौराष्ट्र) से जो एक ताम्रपत्र मिला है उससे भी इस बात की पुष्टि होती है। इस ताम्रपत्र को प्रो. प्राणनाथ ने पढ़कर प्रकट किया कि सुजाति का नृप नभचंद्र राज रेवानगर का भी स्वामी था। वह रैवत (गिरिनार) तीर्थंकर नेमिजिन की वंदना करने आया था। अतएव यदि सुलोग ही मोहनजोदड़ो की सभ्यता के निर्माता हो तो वह भी जैनधर्म के सिक्त थे।

द्रविड़ों के विषय में भी यही सिद्ध होता है कि वे वैदिक क्रियाकांड को नहीं मानते थे। अहिंसक संस्कृति के अनन्य भक्त थे। ऋषभदेव के समय उनके पौत्र मरीचि द्वारा सांख्य दर्शन का प्रादुर्भाव, बीसवें तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ के तीर्थकाल में पर्वत नारद का प्रसंग, तीर्थंकर नेमिनाथ के द्वारा बारात में पशु हिंसा और

मांसाहार का (अमान्यता रूप) विरोध, उसी समय श्रीकृष्ण द्वारा गौरक्षा और दुग्ध आदि के प्रचार द्वारा हिंसा का निषेध होता रहा। इसके पूर्व एवं पश्चात् भगवान ऋषभदेव के पुत्र भरत द्वारा धार्मिक पुरुषों के पृथक वर्ग की ब्राह्मण रूप में स्थापना, 18 वें तीर्थंकर अरनाथ के तीर्थकाल में मुनि विष्णु कुमार द्वारा अपनी तपस्या को भंग करते हुए बलि द्वारा किये गये उपसर्ग से 700 मुनियों की रक्षा जिस स्मृति में रक्षा बंधन पर्व मनाया जाता है।

20 वें मुनिसुव्रत तीर्थंकर के काल में श्री रामलक्ष्मण और महावीर हनुमान द्वारा रावण से अपहृत देवी सीता की रक्षा में लाखों सैनिकों को युद्ध संहार करके भी अहिंसा धर्म के अंग वीरता एवं पराक्रम का आदर्श प्रस्तुत करना, 23 वे तीर्थंकर पार्श्वनाथ द्वारा पंचाग्नि तप की काष्ठाग्नि में मरणासन्न नागनागिनी को णमोकार मंत्र श्रवण कराकर उनकी भवनवासी के सम्बन्धित उच्च देव पर्याय में प्राप्त करने में निमित्त बनना।

उक्त घटनाओं से इतिहासज्ञ विद्वानों की यह मान्यता निराधार नहीं है कि मोहनजोदड़ों की सिंधु संस्कृति को अनुप्राणित करने वाले योगी जैन श्रमण थे। प्राचीन काल में जैनवादी अपने धर्म चिन्हों से चिह्नित मुद्राओं का उपयोग बाद (शास्त्रार्थ) प्रसंगों और अर्थ व्यवहार में करते थे। किसी को शास्त्रार्थ के लिए चेलेंज देते हुए सार्वजनिक स्थान पर अपना पीत वस्त्र या धर्ममुद्रा छोड़ देते थे। जैसे कुछ समय पूर्व लिखित सूचना देते थे।

तीर्थंकर मूर्तियों व ध्वजाओं के चिह्न भी जैन जनता में प्रचलित हैं मूर्तियों के अतिरिक्त अन्य स्थानों (भवनों) मंदिरों पर भी स्वस्तिक, कलश, इत्यादि चिह्न मिलते हैं। मंदिर के शिखरों पर भी सिंह आदि चिह्न अंकित होते हैं।

जैनधर्म का सर्वप्रथम उपदेश भगवान ऋषभदेव ने दिया था यह भारतीय पुरातत्व से सिद्ध है। राजा खारवेल के हाथी गुफा वाले लेख में एक नंदवंशी राजा द्वारा ऋषभदेव की मूर्ति को कलिंग से पाटलिपुत्र ले जाने का उल्लेख है इससे सिद्ध है कि ऋषभदेव की मूर्तियाँ पहले से बनने लगी थी। खंडगिरी की गुफाओं में ऋषभदेव की मूर्तियाँ उकेरी हुई है।

मथुरा के कंकाली टीले से ईसा से पूर्व व प्रथम शताब्दी के प्रारंभिक काल में जैन मूर्तियाँ निकली है जिनमें ऋषभदेव की भी है। (जैनस्तूप एण्ड अदर एक्टीविटीज आफ मथुरा पृ. 21-30) इस पर ऋषभदेव के अस्तित्व को 8 ई.वर्ष पूर्व के लोग भी स्वीकार करते थे और उन्हें अग्रजिन के रूप में (स्टडीज इन साउथ इंडियन जैनिज्म भाग 2, पृ.4) मानते थे जैसा कि हाथी गुफा के शिलालेख में अंकित है बौद्ध साहित्य से भी यह प्रमाणित है कि जैनधर्म बुद्ध के जन्मकाल में एक सुसंगठित धर्म था और वह निग्गंथधम्म नाम से बहुत पहले से चला आ रहा था। अंगुत्तर निकाय में एक सूची भगवान बुद्ध के समय के साधुओं की ही है और उसमें निग्गंथ (जैनों) को आजीवकों के बाद दूसरे नंबर पर गिना है।

यहाँ तो बुद्ध से पूर्व निग्गंथ धर्म था (डायोलाग्स आफ दी बुद्ध बाल, 2, इण्टो, कालुपा) यह बताना है। वैदिक काल में व्रात्य नाम से जैन परिचित थे यह हिन्दु विद्वान मानते हैं।

जैन धर्म की वैदिक धर्म पर अहिंसा के कारण छाप पड़ी। श्री लाजपत राय, भारत वर्ष का इतिहास

भाग 1 पृ. 129 और लोकमान्य तिलक के व्याख्यान से यह प्रमाणित हैं जैनों के अहिंसा आदि पांच व्रतों के कारण उन्हें व्रात्य कहना उचित था।

धर्मकीर्ति बौद्धाचार्य भी सर्वज्ञ आप्त के उदाहरण में ऋषभ और महावीर वर्द्धमान का उल्लेख करते हैं। (न्याय बिंदु अ. 3) बौद्धाचार्य आर्यदेव भी जैन धर्म के आदि प्रचारक श्री ऋषभदेव को बतलाते हैं। वेदों और उपनिषदों में ऋषभदेव आदि के उल्लेख विद्यमान है। रामायण के बालकांड (सर्ग 14 श्लोक 22) में राजा दशरथ द्वारा श्रमणों को आहार देने का उल्लेख है। 'तापसा भुंजते चापि श्रमणाभुंजतै तथा'। यहाँ श्रमण शब्द 'भूषण' टीका अनुसार दिगम्बर साधु के लिए किया गया है। 'योगवासिष्ठ' प्रसिद्ध ग्रंथ में भी जिन नाम आया है। रामायण में बताया कि रामचंद्र जी राजसूर्य यज्ञ करने को तैयार हुए थे परन्तु भरत जी ने अहिंसा धर्म का महत्व समझाकर उन्हें रोक दिया

(प्रिंसपिल्स आफ हिन्दू ईथक्स पृ. 446)

रामचंद्र जी के ससुर जनक जी बहु प्रसिद्ध हैं। जैन पुराणों से जाना जाता है कि वे पहले वेदानुयायी थे। परन्तु बाद में जैनधर्म का प्रभाव उन पर पड़ा था और वे जैनधर्म के ज्ञाता हुए थे। (उत्तरपुराण पृ.335) कहा है कि एक बार महर्षि गार्ग्य उनके पास पहुँचे। उन्हें उपदेश देने लगे। वे उनको अधिक उपदेश न दे सके प्रत्युत उन्होंने स्वयं ब्राह्मण होते हुए उन क्षत्रियराज से ब्राह्मधर्म-आत्मधर्म का उपदेश ग्रहण किया (विश्वकोष भाग 1 पृ. 202) जैनधर्म क्षत्रियों (तीर्थकरों) द्वारा प्रतिपादित आत्मधर्म है। अतएव रामायण के बाद महाभारत काल में भी जैनधर्म के चिह्न मिलते हैं।

महाभारत के अश्वमेघ पर्व की अनु. गीता अ. 48 श्लोक 2 से 12 तक में जैन और बौद्ध के अलग-अलग होने की साक्षी है। इसके अतिरिक्त महाभारत के आदि पर्व अ.3 श्लोक 26-27 में भी जैन मुनियों का उल्लेख नग्नश्रमणक के रूप में है।

"अद्वैत ब्रह्म सिद्धि" नामक हिन्दू ग्रंथ के कर्त्ता, नग्नक्षपणक का अर्थ जैन मुनि करते हैं। यथा 'क्षपणका:' जैनमार्ग सिद्धांत प्रवर्तका: इति केचित्। (पृ.189) इसके साथ ही महाभारत, शांतिपर्व मोक्षधर्म अ.239 श्लोक 6 में सप्तभंगीनय का उल्लेख है। फिर इसी पर्व के अ.263 पर नीलकंठ टीका में ऋषभदेव के पवित्र चरण का प्रभाव आर्हतों व जैनों पर पड़ा कहा गया।

(जैन इतिहास सीरिज भाग 1 पृ. 13) इन उल्लेखों से महाभारत काल में भी जैनधर्म का प्रचलित होना सिद्ध है। भगवान पार्श्वनाथ के पहले उपनिषदों के साथ कोई वेद विरोधी ऐसे तत्ववेत्ता अवश्य थे जिनकी ब्रह्म विद्या (आत्मविद्या) के आधार पर उपनिषदों की रचना हुई थी। श्री उमेशचंद्र भट्टाचार्य ने यह व्याख्या अन्यत्र अच्छी तरह प्रमाणित कर दी है। (इंडियन हिस्टोरिकल क्वारटर्ली भाग 3 पृ. 307-315) उनका कहना है कि इस समय उस ब्रह्म विद्या का प्राय:लोप है। उनके बचे खुचे चिह्न उपनिषदों में यत्र-तत्र मिलते हैं। अब विचारने की बात है कि उपरोक्त ब्रह्मवादी कौन थे? यदि हम ब्रह्म शब्द को जीव-अजीव का द्योतक माने जैसा कि प्रगट किया जाता है। (वीर वर्ष 5, पृ. 238) तो उनका सामंजस्य जैन सिद्धांत से ठीक बैठता है। उपनिषद्

काल में जैनधर्म का मस्तक अवश्य ऊँचा रहा था, यह बात मुंडकोपनिषद् एवं अथर्ववेद के उल्लेखों से ईसा से पूर्व छठी सातवीं शताब्दियों बल्कि इससे पूर्व के क्षत्रियों की प्रधानता के चिह्न उस समय के भारत में मिलते हैं। उस समय का प्रधान धर्म क्षत्रिय धर्म (जैनधर्म) था। उस समय ब्राह्मण धर्म का भी स्थान था। उपनिषदों में जो वर्णन है उससे प्रकट होता है कि काशी, कौशल, विदेह के ब्राह्मण क्षत्रियों को प्रधान मानते थे। अथर्ववेद के 15वें स्कंध में जिस महाव्रात्य का वर्णन है, ऋषभदेव के लिए है जो व्रतों को सर्वप्रथम प्रकट करने वाले थे। वे सर्वप्रथम तपश्चरण की मुख्यता कायोत्सर्ग आसन द्वारा सर्दी गर्मी व अन्य कठिनाईयों को सहते हुए ध्यान मगन रहना है। ऋषभदेव इसी अवस्था में तपस्यानलीन रहते थे। उनकी मूर्ति कायोत्सर्ग रूप में मिलती है। अथर्ववेद में ऋषभदेव के कायोत्सर्ग तपस्या और समवसरण में बैठने का उल्लेख है और देवों ने उनसे कहा, व्रात्य अब आप क्यों खड़े हैं? वे आसन लाये और उस आसन पर व्रात्य आरूढ़ हो गए इन महापुरुष का गौरव विशिष्ट देवताओं से भी उच्चतम प्रगट किया है। ये महापुरुष सर्वदिशाओं में विचरते और उनके पीछे देवों को जाते और दिग्पालों को उनका सेवक भी बताया है। यह सब कथन एक जैन तीर्थंकर के जीवन कथन के समान है।

व्रात्य को आहार दान देने के फलस्वरूप पुण्य और संपत्ति को पाना भी बतलाया है, जो जैन दृष्टि के अनुकूल है। अथर्ववेद में जिस महाव्रात्य का वर्णन है वे कोई जैन तीर्थंकर है, जो स्वयं भगवान ऋषभदेव हैं। उक्त अनेक उल्लेखों से यह प्रमाणित है कि जैनधर्म प्रागैतिहासिक प्राग्वैदिक धर्म है इसके आद्य प्रर्वतक भगवान ऋषभदेव ही हैं। जब नागरिक सभ्यता का विकास नहीं हो पाया था, उस समय व्यक्ति प्राय: वनों में रहते थे। मनुष्यों के निवास के लिए नगरों का निर्माण नहीं हो पाया था। लोग खेती करना जानते थे, न पशुपालन, नहीं कोई उद्योग धंधे थे। उस समय के लोग अपनी खानपान की व अन्य सभी आवश्यकताओं की पूर्ति कल्प वृक्षों (पृथ्वीरूप) से करते थे। वह पाषाण युग माना जाता था। उस समय न कोई समाज व्यवस्था थी, न ही पारिवारिक संबंध। माता-पिता युगल पुत्र-पुत्री को जन्म देकर दिवंगत हो जाते थे। इसे पुराणकारों ने भोगभूमि कहा है। यह व्यवस्था धीरे-धीरे समाप्त होने लगी और कर्मभूमि के प्रारम्भ का समय आया। अभी कर्मभूमि प्रारम्भ नहीं हो पाई थी। कल्पवृक्षों की मन्दता से तत्कालीन जनता का कष्ट बढ़ने लगा। ग्रीष्म-शीत आदि की बाधायें लोगों को सताने लगी।

भोगभूमि के अंत में और कर्मभूमि के पूर्व 14 कुलकर हुए। उन्होंने तत्कालीन मानवों को प्रकृति का रहस्य और जीने की कला सिखलाई। कल्पवृक्षों की मन्दता और उनसे आवश्यकताओं की पूर्ति न होने तथा समय-समय आने वाली बाधाओं को दूर कर आत्म-रक्षा का शिक्षण दिया। वैदिक परम्परा में भी 14 मनु बतलाये हैं उनका भी कुलकरों के समान ही स्थान है। 14 कुलकरों में अंतिम 14वें कुलकर नाभिराय के पुत्र 24 तीर्थंकरों के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव हुए उन्होंने कृषि आदि का मार्ग दर्शन कर प्रजा का नेतृत्व किया। उन्हें भी इसीलिए 15 वां मनु या कुलकर माना जाता है। उनके संबंध में वेद एवं भागवत आदि में जो प्रमाण आये हैं, उनका उल्लेख पूर्व में कर दिया गया है।

अहो मुंच वृषभं यंति यानां विराजंत प्रथम मध्वराणां।
अपां न पातमश्विना हुवे धिय इन्द्रियेण इन्द्रियं दत्तभोजः॥

अर्थात्- संपूर्ण पापों से मुक्त तथा अहिंसक व्रतियों के प्रथम राजा आदित्य स्वरूप श्री वृषभदेव का मैं आवाहन करता हूँ। वे मुझे बुद्धि एवं इन्द्रियों के साथ बल प्रदान हैं।

(अथर्ववेद कां. 19/42/4)

डॉ. सागरमल जी जैन ने-

'ऋग्वेद में अर्हंत और ऋषभवाची ऋचायें' लेख में बतलाया है कि-''ऋग्वेद में न केवल सामान्यरूप से श्रमण परम्परा और विशेषरूप में जैन परम्परा से संवद्ध अर्हत्, अर्हन्, व्रात्य, वातरशना, मुनि, श्रमण आदि शब्दों का उल्लेख मिलता है, अपितु उसमें अर्हत् परम्परा के उपास्य वृषभ का भी उल्लेख शताधिक बार मिलता है। मुझे वृषभवाची 112 ऋचायें प्राप्त हुई हैं। संभवत: कुछ और ऋचायें भी मिल सकती है। यद्यपि यह कहना कठिन है कि इन सब ऋचाओं में प्रयुक्त वृषभ शब्द ऋषभ का ही वाची है, फिर भी कुछ ऋचायें तो अवश्य ऋषभदेव से संबद्ध ही मानी जा सकती है। डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, प्रो. जिम्मर, प्रो. विरूपाक्ष वार्डिया आदि कुछ जैनेतर विद्वान भी इस मत के प्रतिपादक है कि ऋग्वेद में जैनों के आदि तीर्थंकर ऋषभदेव से संवद्ध निर्देश उपलब्ध होते हैं।''

ऋग्वेद के अतिरिक्त यजुर्वेद, अथर्ववेद और सामवेद में भी ऋषभदेव का अनेकश: उल्लेख मिलता है। ऋषभदेव की स्तुति भागवत्, मार्कंडेयपुराण, कूर्मपुराण, विष्णुपुराण, अग्नि पुराण, ब्रह्मांडपुराण, वराटपुराण और स्कंध पुराण आदि में की गई है, साथ ही उनके माता, पिता और पुत्र आदि के नाम तथा जीवन की घटनाओं का भी विस्तार से वर्णन है।

श्री भगवत के प्रथम स्कंध, अध्याय तीन में राजा नाभि की पत्नी मरुदेवी के गर्भ में ऋषभदेव भगवान का आठवां अवतार माना है। महाभारत शांतिपर्व में भी ऋषभदेव का कथन है। एक श्लोक है-

अष्टषष्ठिषु तीर्थेषु यात्राया: यत्फलं भवेत्।
श्री आदिनाथदेवस्य स्मरणेनापि तद्भवेत्॥

अर्थ- 68 तीर्थों की यात्रा का जो फल होता है, वह आदिनाथ देव के स्मरण से प्राप्त हो जाता है।

बौद्ध साहित्य में भी ऋषभेव का कथन मिलता है। धम्मपद में उन्हें प्रवरवीर कहा है। (उसमं पवरं वीरं 422) मंजुश्री मूल कल्प में उनको निर्ग्रंथ तीर्थंकर और आप्तदेव के रूप में उल्लिखित किया गया है। 'न्यायबिन्दु'- अध्याय तीन में ऋषभ और वर्द्धमान को सर्वज्ञ अर्थात् केवलज्ञानी आप्त तीर्थंकर बताते हुए दिगम्बरों का अनुशास्ता कहा गया है। 'धर्मोत्तर प्रदीप' पृ. 286 में भी विश्वम्भर सहाय प्रेमी लिखते हैं- ''शुद्ध ऐतिहासिक दृष्टि से यदि इस प्रश्न पर विचार करें तो भी यह मानना ही पड़ता है कि मोहनजोदड़ो की मुद्राओं में जैनत्व बोधक चिह्नों का मिलना तथा वहाँ की योग मुद्रा ठीक जिनमूर्तियों के सदृश होना इस बात का प्रमाण है

कि तब ज्ञान और ललित कला में जैन किसी से पीछे नहीं थे।'' अनेक विद्वानों ने स्वीकार किया है कि सिंधु घाटी की सभ्यता जैन संस्कृति से संबद्ध थी। रामायण काल में जैनधर्म की विद्यमानता प्रमाणित होती है। योगवशिष्ठ (प्रसिद्धवैदिक ग्रंथ) के वैराग्य प्रकरण में श्रीराम कहते हैं-

नाहं रामो न मे वांछा, भावेषु न च मे मनः।
शांतिमासितुमिच्छामि, स्वात्मन्येव जिनोयथा॥

(अध्याय 15 श्लोक)

अर्थ- मैं वर्तमान स्थिति वाला राम नहीं हूँ। सांसारिक पदार्थों में मेरी कोई अभिलाषा नहीं है। मैं जैसे निज आत्मा में जिनेन्द्र लीन रहे हैं वैसे ही मैं भी आत्मलीन होकर शांति का इच्छुक हूँ।

प्राचीन आर्यों की मूल जन्मभूमि कहाँ थी, वे लोग कब वहाँ से चले और किस-किस देश में कब-कब जाकर बसे इस विषय में अन्वेषकों का विभिन्न मत है। परन्तु विशेष प्रमाणों के होते हुए यह युक्ति संगत प्रतीत होता है कि आर्यों का मूल स्थान भारत वर्ष ही था। (जैन इतिहास प्रथम भाग- कामता प्रसाद जी पृ. 14) जैसा कि हिंदी विश्व कोष के भाग 2 पृ. 689 पर प्रमाणित किया गया है। यहाँ लिखा है कि ''ऋक्संहिता के अनु प्रत्न स्यो कसो हुवे'' (1/30/19) प्रमाण पर युरोपीय पुरातत्वविद् सारस्वत आर्यों के आदि पुरुषों का पूर्ववास एशिया खंड के मध्यभाग स्थित बेलुर्ताग और सुशाताग की पश्चिम पार्श्व गत उपत्यका भूमि बताते हैं।

किन्तु वस्तुतः पहले आर्यावास सप्त सिंधु प्रदेश रहा। गंगा, यमुना, सरस्वती, शतद्रु, परूष्णी (इरावती), चन्द्रभाग, वितस्ता इनमें इरावती, चन्द्रभाग, वितस्ता इनके सम्मिलन से संभृत मरुद्धधा, शतद्रु के पश्चिम पार्श्व के संगत प्राचीनतम वर्तमान नाम विपाशा और तक्षशिला प्रदेश से निम्नगामी सिंधु संगत सुषोमा सात नदी जिस भूभाग में (सप्तसिंधु या सप्तनद) बहती वह प्रदेश सिंधु के पूर्व पार पड़ता है। सिंधु पश्चिम पार भी सप्तनद प्रदेश दूसरा विद्यमान है। आजकल यह आर्यावर्त (भारत) से अलग होते हुए भी उसके अंतर्गत रहा। इसी विषय में **मि. नारायण भवन राव पाथगी** ने अपनी ''आयर्न केडल इन दी सप्त सिंधूज'' पुस्तक में लिखा है कि ''आर्य जातियाँ विदेशों से न आकर वही सरस्वती नदी आदि के पास उत्पन्न हुई और इसे लाख पचास हजार वर्ष से कम नहीं हुए।''

अतः यह प्रगट है कि आर्यों का मूल निवास भारत वर्ष था और वे यहीं से जाकर अन्य विदेशों में बसे थे। इसलिए जैन दृष्टि से वर्तमान के यूरोपादि छहोंद्वीपों को आर्यावर्त (आर्यखंड) के अंतर्गत मानना सिद्ध होता है। इसकी पुष्टि अन्यदेशों के ग्रंथों में आर्य शब्द का उल्लेख होने से भी होती है। यूनानी लोगों ने भी आर्य देश का उल्लेख किया है। ''र'' धातु कृषि वाचक है जिससे अर्य या आर्य बना है।

उक्त विवेचन से जब आर्य इस देश के मूल निवासी सिद्ध है तो जैन जिस दर्शन के उपासक है वह आर्य दर्शन है अतः जैन भी यहीं के मूल निवासी हैं। पूर्वी आर्य आर्य थे, जो भारत के मूल निवासी थे, जिन्हें जैन कहा जाता है, क्योंकि निम्नलिखित 'स्मृति' का श्लोक उन पर नहीं घटता।

चातुवर्ण व्यवस्थानं यस्मिन् देशे न विद्यते।
म्लेच्छदेशः स विज्ञेयः, आर्यावर्तस्ततः परम्॥

अर्थ- जिस देश में चारों वर्णों की आश्रम व्यवस्था नहीं, वह म्लेच्द देश होता है। आर्यावर्त उसमें भिन्न है। जैनों में वर्ण व्यवस्था उनके प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव द्वारा स्थापित की गई है। उन्हीं के पुत्र भरत के नाम पर भारत वर्ष, जिसे आर्यावर्त कहते हैं, प्रसिद्ध हुआ। भरत द्वारा ही पूर्व क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्ण के सिवाय चौथा वर्ण ब्राह्मण भी स्थापित किया गया था। इस प्रकार पूर्वी आर्य म्लेच्छ कदापि नहीं थे। इसके अतिरिक्त एक विशेष बात और है कि वेदों में यज्ञ विषयक हिंसा का विधान पहले नहीं था, पीछे बढ़ा दिया गया। इस पर हम पहले प्रकाश डाल चुके हैं।

वेदों को ईश्वर कृत बतलाना भी अतिशयोक्ति है। यो वेद ज्ञान का पर्यायवाची है। जब आत्मा व परमात्मा अनादि है तो उसका स्वरूप चेतनता याने ज्ञान भी अनादि है इस दृष्टि से सामान्य ज्ञान या वेद अनादि हो सकता है उसे इसीलिए अनादि परमात्मा या ईश्वर रूप माना जा सकता है। परन्तु शब्द या वाणीरूप, जो पौद्गलिक है वह शब्द रूप शास्त्र अनादि कभी नहीं हो सकता क्योंकि शब्द या वाणी पौद्गलिक परमाणुओं से वेष्टित आकाश में होकर श्रोताओं के कर्ण गोचर होता है। मनोवृत्ति, जिससे उसकी उत्पत्ति है, अणुओं से परिपूर्ण है। उसके बिना उत्पत्ति संभव नहीं। अतः परमात्मा जब किसी से बातचीत नहीं कर सकता तब बिना शब्दोच्चारण के वेद शास्त्र की उत्पत्ति कैसे हो सकती है? इसलिए ईश्वर कृत वेद नहीं है।

(प्रेक्टिकल पाथ-वैरिस्टर चंपत राय कृत)

वेदशास्त्रों में नाना ऋषि कवियों की रचनाये हैं। ऋषियों ने मंत्रों को कविता में प्रकट किया है। वेद मंत्रों में सूर्य, अग्नि आदि की उपासना के रूप में आत्मा के गुणों का वर्णन है। वेदिक काल की उच्च सभ्यता का विचार करते हुए यह नहीं माना जा सकता कि वेद रचयिता ऋषि प्राकृतिक शक्तियों से भयभीत होकर उनकी उपासना करते। शाकाहारी ऋषियों ने वेदमंत्रों में आत्मा के गुणों का अलंकार रूप में वर्णन किया है। **श्री वेरिस्टर चंपतराय जी** ने अपनी उक्त पुस्तक एवं ''की आफ नालेज'' जिसका हिन्दी अनुवाद 'असहमत संगम' है। उसमें इसका सुन्दर विवेचन किया है। पीछे कुछ अंग्रेजों या मांस लोलुपी लोगों द्वारा वेदों की ऋचाओं का अनुवाद मांसाहार से संबंधित कर याज्ञिकी हिंसा को प्रोत्साहन दिया है। इसी पुस्तक से संक्षेप में हमने इसका स्पष्टीकरण किया है।

वेदों को दैवी वाणी मान कर भक्तों ने न्यूनाधिक परिवर्तन कर दिया जो यथार्थ पवित्रता के विरुद्ध था। महाभारत के अनुसार पर्वत द्वारा अपने पक्ष 'अज' का अर्थ बकरा करके उसके मांस का प्रचार करते रहने से राज्य से निकाले जाने पर उसे एक देव ब्राह्मण के रूप में मिला जिसने अपने शांडिल्य ऋषि बतलाया, अपने एक पूर्वभव में वह मधु पिंगल राजा था, जिसकी भावी स्त्री किसी शत्रु द्वारा न मिलने पाई थी। उस कन्या की माता ने मधुपिंगल के गले में कन्या (सुलसा नामक) द्वारा वरमाला डालने में कोई संदेह नहीं किया। किंतु शत्रु राजा सागर को भेद मालूम हो गया और उस कन्या के रूप पर आसक्त होकर उसने मंत्री से सलाह ली किन्तु दुष्ट

मंत्री ने मिथ्या सामुद्रिक शास्त्र बनाकर स्वयंवर स्थान में गाड़ दिया। जब राजा लोग स्वयंवर में एकत्रित हुए तब उस ग्रंथ को मंत्री ने दैवी कृत्य के रूप में निकाला। पत्र के पढ़ने पर मधुपिंगल ने साधु रूप धारण कर लिया क्योंकि पत्र में उसके दुर्भाग्य का उल्लेख था। उस कन्या ने राजा सागर के गले में वरमाला डाली। कुछ समय बाद मधुपिंगल को किसी ज्योतिषी से सच्चा हाल ज्ञात हुआ वह क्रोध में मरकर उक्त देव हुआ। उस देव ने सागर से अपनी पूर्व शत्रुता का बदला लेने हेतु पर्वत द्वारा सागर के नगर में भारी रोग फैला दिया जिससे बचने को पशु यज्ञ का प्रचार प्रसार हुआ। पर्वत से पशु यज्ञ, पशु बलिदान एवं मांसाहार को प्रोत्साहन मिला।

इन कार्यों से स्वर्ग प्राप्ति का प्रलोभन भी दिया गया। भाषा की दृष्टि से विचार करें तो सबसे प्राचीन लिपि ब्राह्मी है, जो ऋषभदेव तीर्थंकर की पुत्री ब्राह्मी के नाम से प्रचलित है। ऋषभदेव से महावीर तीर्थंकर तक का धर्मोपदेश प्राकृत भाषा में हुआ है जिसके भेद अर्ध- मागधी एवं शौरसेनी तीर्थंकर की वाणी सर्व भाषामय मानी गई है।

मि. विसेंटस्मिथ लिखते हैं-

कि उत्तर पश्चिमीय भारत भी समग्र आर्य भाषायें प्राचीन प्राकृत भाषाओं से उत्पन्न हुई है।

(आक्सफोर्ड हिस्ट्री आफ इंडिया पेज 13)

जैनों के प्राचीन शास्त्र प्राकृत भाषा में है उत्तरी पश्चिमी भारत की सभी भाषायें प्राकृत से निकली है। भारत में प्राचीन समय में यहाँ के आर्य ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र इन चार वर्णों के अनुसार चार जातियों में विभक्त रहे हैं। पीछे विदेशी जातियों के आक्रमण से उनमें मिश्रण हो गया। इस प्रकार भारतीय जनता अनेक जातियों में विभाजित हो गई। प्रांतों और भाषाओं के कारण भी जातियों का नामकरण हो गया।

प्राचीनतम जैनधर्म जैन आगम से

यह संसार अनादि है। इसका कर्त्ता हर्त्ता कोई नहीं है। जैन भूगोल की दृष्टि से तीन लोक में मध्यलोक के बीचोंबीच जंबूद्वीप के सात क्षेत्रों में से प्रथम भरतक्षेत्र के मध्य आर्यखंड में उत्सर्पिणी (उन्नति) काल और अवसर्पिणी (अवनति) काल के छह-छह हिस्सों में वर्तमान अवसर्पिणी के तृतीय भोगभूमि (कल्पवृक्ष-प्रस्तर युग) के अंत में चौदहवें कुलकर (मार्गदर्शक नेता) नाभिराय के पुत्र प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव हुए। ऋषभदेव के भरत, बाहुबलि तथा 99 पुत्र (द्रविड़, अनंतकीर्ति आदि) एवं ब्राह्मी, सुन्दरी दो बाल ब्रह्मचारिणी पुत्रियाँ उत्पन्न हुई। इनमें भरत के नाम से भारत वर्ष और ब्राह्मी के नाम ब्राह्मी लिपि प्रसिद्ध है। द्रविड़ के नाम से द्राविड़ संस्कृति (जैन परम्परा) और अनंतकीर्ति इस काल में सर्वप्रथम मोक्षगामी हुए। उन्नति युग में धीरे-धीरे उन्नति होती है और अवनति युग में धीरे-धीरे अवनती होती है। प्रत्येक के सुषमा-सुषमा, सुषमा, सुषमा-दुषमा, दुषमा-सुषमा, दुषमा, दुषमा-दुषमा थे ये अवनति युग के इनसे विपरीत दुषमा-दुषमा, दुषमा, दुषमा-सुषमा, सुषमा-दुषमा, सुषमा, सुषमा-सुषमा ये उन्नति युग के भेद है। वर्तमान में अवनति युग का पंचमकाल दुषमा चल रहा है। सुषमा-सुषमा (बहुत अच्छे सुख का समय) दुषमा-दुषमा (बहुत बुरे दुःख का समय) ये सब उत्तरोत्तर नामानुसार घटते बढ़ते रहते हैं। जहाँ बिना परिश्रम प्राकृतिक रूप से उपभोग सामग्री

मिलती है वह भोगभूमि और जहाँ परिश्रम द्वारा सामग्री प्राप्त की जाती है वह कर्मभूमि कहलाती है। उन्नति में शरीर आयु आदि बढ़ती है और अवनति में घटती है। नाभिराय चौदहवें कुलकर थे, उनकी महारानी मरुदेवी थी जिनके गर्भ से ऋषभदेव (आदिनाथ) प्रथम तीर्थंकर (धर्म प्रवर्तक) हुए। इस काल में तीर्थंकर 24 होते हैं इनमें 22 इक्ष्वाकु वंश के दि. जैन क्षत्रिय, 1. हरिवंश और 1 कश्यप (नाथ) वंश के क्षत्रिय तीर्थंकर थे। भगवान ऋषभदेव का विवाह नन्दा एवं सुनन्दा कन्याओं से हुआ था। यह विधि पूर्वक विवाह परम्परा यहीं से चली है। अपने पुत्र-पुत्रियों को भगवान ने ही विविध कलाओं की शिक्षा प्रदान की। अपनी दोनों कन्याओं को स्वायंभुव व्याकरण का निर्माण कर अध्ययन कराया। भोगभूमि के अंत होने से कल्पवृक्ष भी नष्ट हो गये थे। समस्त प्रजा को खाद्यसामग्री न मिलने से भूख से पीड़ित देखकर कृषि का मार्ग बताया। प्रजा के हितार्थ असि, मषि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प का उपदेश दिया। नगर-ग्राम का निर्माण कराया। क्षत्रिय, शूद्र, और वैश्य इन तीन वर्णों की स्थापना की। भगवान के समय से राज्य व्यवस्था प्रारंभ हुई। उनका राज्याभिषेक हुआ। श्रीमद्‌भागवत् में ऋषभदेव को वैदिक 24 अवतारों में आठवां अवतार माना है।

ऋषभदेव ने अप्सरा नीलांजना का राज्य सभा में नृत्य देखकर उसकी आयु समाप्त होने पर इन्द्र द्वारा भेजी हुई वैसी ही दूसरी अप्सरा नृत्य करती हुई जानकर वैराग्य ग्रहण कर लिया। भरत को राजा और बाहुबलि को युवराज का पद प्रदान कर भगवान ने दिगंबरी दीक्षा धारण की तो उनके साथ अनेक राजाओं ने भी दीक्षा ग्रहण कर ली। परन्तु वे दु:खों को सहन नहीं कर सके और भूख सहन न होने से फल-फूल खाने लगे। गांवों में डर के कारण न जाकर वन में ही पत्तों, छाल से तन को ढक लिया। कोई दंड धारण कर दंडी बन गये। भगवान के पौत्र मारीचि ने नया मत चला दिया। भगवान छह माह तक उपवास रखकर पश्चात् आहार को नगर में आए परन्तु आहार विधि न मिलने से छह माह तक फिर निराहार रहे। कुरू जंगल देश के राजा सोमप्रभ के छोटे भाई श्रेयांस को जातिस्मरण (पूर्वभव का ज्ञान) हो जाने से उनके द्वारा भगवान को वैशाख सुदी 3 को इक्षुरस का आहार दिया गया। तबसे उक्त दिन अक्षय तृतीया के नाम से प्रसिद्ध हुआ। भरत चक्रवर्ती ने पुत्रोत्पत्ति, चक्ररत्न की प्राप्ति की और भगवान को कैवल्य की उपलब्धि हुई। चक्रवर्ती ने समवसरण में केवलज्ञान की पूजा की। चक्रवर्ती को जन्म का सूतक नहीं लगता। भगवान ब्राह्मी और सुन्दरी दोनों पुत्रियों ने भी आर्यिका दीक्षा ग्रहण की। समवसरण सभा में देव 4 प्रकार के, देवियाँ 4 प्रकार की, मुनियों, आर्यिका एवं महिलाओं, मनुष्यों और पशुओं के क्रमश: 12 कोठे उपदेश श्रवण हेतु विद्यमान थे। भरत ने शुद्धाचरण वालों का ब्राह्मण वर्ण स्थापित किया।

भरत ने चक्र और सेनापति आदि को लेकर षट्खंड की विजय की। वापस अयोध्या में आने पर चक्र का प्रवेश न देखकर मालूम किया कि बाहुबलि उसकी आधीनता स्वीकार नहीं कर रहे हैं। बाकी पुत्रों ने दीक्षा ले ली। भरत और बाहुबलि को तद्‌भव मोक्षगामी चरम शरीरी जानकर मंत्रियों ने व्यर्थ में सेनाओं का संहार न हो इसलिए दोनों का जल, नेत्र और मल्ल युद्ध निश्चित किया। तीनों युद्धों में बाहुबलि की विजय होने पर भरत ने सुदर्शन चक्र चलाया, किन्तु परिवार के नाते चक्र बाहुबलि के चारों ओर घूमकर उनके समक्ष रुक गया।

बाहुबलि को संसार की दशा देखकर वैराग्य हो गया और वे एक वर्ष तक खड्गासन से तपस्या करते रहे, उनके शरीर पर लताये लिपट गईं। एक वर्ष हो रहा था कि भरत आदि उनके दर्शनार्थ आये और बाहुबलि को केवलज्ञान हो गया। इनके जीवन चरित्र के वर्णन में किन्हीं का मत है कि बाहुबलि को यह अभिलाषा थी कि मैं भरत की भूमि पर खड़ा हूँ। इस शल्य से केवलज्ञान नहीं हो रहा था। यह जानकर भरत और बाहुबलि की ब्राह्मी और सुन्दरी बहनों से कहलाया गया कि हे भाई! मान रूपी हाथी से उतरो। किन्तु यह सब सत्य नहीं हो सकता क्योंकि व्रती को चाहे वे श्रावक भी हो, माया, मिथ्यात्व और निदान ये तीन शल्य नहीं होती। तत्वार्थसूत्र के 7 वें अध्याय में आचार्य गृद्धपिच्छ (लौकिक नाम उमास्वामी) ने 'निःशल्योव्रती' सूत्र में व्रती के शल्य का निषेध बतलाया है, क्योंकि मिथ्यादृष्टि के ही ये तीनों शल्य होती है। क्या बाहुबलि के ऐसी बड़ी शल्य थी जो सम्यग्दृष्टि और छठे सातवें गुणस्थानवर्ती दि. जैन मुनि के नहीं हो सकती। आदिपुराण में आचार्य जिनसेन ने बाहुबलि को महान भावलिंगी मुनि और अनेक बड़ी-बड़ी ऋद्धियों के स्वामी माना है। बाहुबलि स्वामी के एक वर्ष तक की अवधि का योग कायोत्सर्ग रूप में साधना पूर्ण होते ही केवलज्ञान होना था, उसी समय भरत चक्रवर्ती का आगमन हो गया। आचार्य जिनसेन ने ऐसी शल्य होना नहीं लिखा जिनसे बाहुबलि का अपमान सिद्ध हो।

बाहुबलि ने पृथ्वी पर विहार कर धर्मोपदेश दिया पश्चात् कैलाश पर्वत से मोक्ष प्राप्त किया। इस प्रकार अवसर्पिणी काल से सर्वप्रथम अनंतकीर्ति (भ.ऋषभदेव के पुत्र) मुक्त हुए। उनके पश्चात् बाहुबलि मुक्त हुए।

भरत चक्रवर्ती ने कैलाश पर्वत पर तीन चौबीसी के 72 जिन मंदिर बनवाये थे। दंड विधान में भ.ऋषभदेव के बाद प्राणदंड, देश निकाला, कैद आदि की सजायें रखी थीं। भगवान अजितनाथ द्वितीय तीर्थंकर के समय में सगर चक्रवर्ती हुए जो द्वितीय चक्रवर्ती थे। वे सम्मेदशिखर से मुक्त हुए। तीर्थंकर शीतलनाथ (दशम तीर्थंकर) के मोक्ष जाने के पश्चात् धर्म मार्ग बंद हो गया था। ग्यारहवें तीर्थंकर श्रेयांसनाथ ने पुनः चालू किया। इन्हीं के समय में प्रथम नारायण त्रिपृष्ठ (जो आगे जाकर तीर्थंकर महावीर होंगे। यही मरीचि भगवान ऋषभदेव के पौत्र है) प्रथम प्रतिनारायण अश्वग्रीव और प्रथम बलभद्र हुए। दोनों नरक गामी होते हैं। ये बलभद्र मोक्ष गए। बारहवें तीर्थंकर वासुपूज्य चंपापुर से मुक्त हुए। ये बारहवें तीर्थंकर बालब्रह्मचारी थे। इनके समय में द्वितीय प्रतिनारायण तारक, नारायण द्विपृष्ठ और द्वितीय बलभद्र अचल हुए। तेरहवें तीर्थंकर विमलनाथ के समय तीसरे नारायण स्वयंभू और सुधर्म नामक बलभद्र सुदर्शन हुए। धर्मनाथ तीर्थंकर के तीर्थकाल में मघवा और सनत कुमार चक्रवर्ती हुए।

16-17-18 शांतिनाथ, कुंथुनाथ और अरनाथ ये तीन तीर्थंकर चक्रवर्ती और कामदेव भी थे। 19वें तीर्थंकर मल्लिनाथ के कुछ पहले सुभौम चक्रवती हुए, इसी समय नारायण पुंडरीक और नारायण द्वितीय बलभद्र नंदी हुए। भगवान मल्लिनाथ 19वें तीर्थंकर बालब्रह्मचारी थे। 19वें मल्लिनाथ तीर्थंकर के तीर्थ में महापद्म चक्रवर्ती हुए एवं नारायण दत्त, बलभद्र नंदि मित्र हुए। तीर्थंकर नमिनाथ के पहले, याने मुनिसुव्रत

तीर्थंकर के तीर्थकाल में हरिषेण चक्रवर्ती, जयसेन चक्रवर्ती एवं लक्ष्मण नारायण हुए। बावीसवें तीर्थंकर नेमिनाथ के समकालीन नारायण श्रीकृष्ण, बलभद्र बलदेव थे। नेमिनाथ बाल ब्रह्मचारी थे। बाड़े में पशुओं को बंधा देखकर आप बारात को वापस कर विरक्त हुए थे। यजुर्वेद में आप का नाम आया है।

वाजस्यनु प्रसव आवभूर्वना च विश्वभुवनानि सर्वत:।
नेमिराजा परियाति विद्वान् प्रजां
पुष्टि वर्धयनमानो अस्मै स्वाहा॥

(अध्याय 9 मंत्र 25)

रैवताद्रौ जिनो नेमिर्युगादिर्विमलाचले।
ऋषीणां वा श्रमादेव मुक्ति मार्गस्य कारणम्॥

(प्रभास पुराण)

भगवान पार्श्वनाथ का जन्म ईस्वी पूर्व 949 अथवा 877 में हुआ था। भगवान नेमिनाथ के मुक्त होने के (जैन पुराण दृष्टि से 83750 वर्ष) बाद हुए थे। आपकी आयु 100 वर्ष थी और बालब्रह्मचारी थे। आपने भी मनुष्यों को हिंसा वृत्ति से बचाया था। आपकी ऐतिहासिकता इतिहासकार मानते हैं। देखिये-

1. इन्साइक्लोपीडिया आफ रिलीजन एण्ड ईथिक्स भाग 7 मेज 465
2. शार्ट स्टडीज इन दी साइंस आफ कम्पेरेटिव रिलीजन पत्र 243-4

भगवान पार्श्वनाथ के समय आजीवक, वानप्रस्थ आदि संप्रदाय विद्यमान थे। एक सन्यासी को वन में आपने पंचाग्नितप करते देखा उसकी लकड़ी में एक सर्प युगल अग्नि पीड़ित दिखलाई दिया। मृत्यु के निकट उस जोड़े को पार्श्वकुमार ने णमोकार मंत्र सुनाया। वह युगल मरकर धरणेन्द्र पद्मावती रूप देव योनि में उत्पन्न हुए। वह तापसी भगवान के नवभव पूर्व का कमठ (ज्येष्ठ भ्राता) शत्रु था। वह भी मरकर देवयोनि में उत्पन्न हुआ। उसका नाम संवर था। जब पार्श्वनाथ दिगम्बर दीक्षा लेकर अहिक्षेत्र (**वर्तमान रामनगर-बरेली उत्तरप्रदेश**) में तपश्चरण कर रहे थे। उस समय अपने पूर्व बैर के कारण उसने भयंकर उपसर्ग किये। अग्नि, पत्थर, वायु के पश्चात् जल वर्षा द्वारा कष्ट दे रहा था कि धरणेन्द्र ने मुनिराज पार्श्वनाथ पर छत्राकार सर्पफण से रक्षा की। उपसर्ग आने से तत्काल उन्हें आठ कर्मों में से चार घातिया कर्मों का नाश होकर केवलज्ञान प्रगट हो गया। वे सर्वज्ञ और अर्हंत केवली स्थिति को प्राप्त हो गये।

अर्हंत भगवान पार्श्वनाथ ने समस्त आर्यखंड के विभिन्न देशों में विहार कर समवसरण (धर्मसभा) द्वारा अहिंसा, अनेकांत, कर्मसिद्धांत एवं अपरिग्रह का प्रचार प्रसार किया। सहस्रों भव्य जीवों को धर्म-मार्ग पर लगाया। सम्मेदशिखर से उन्होंने मुक्ति प्राप्त की। तब से वह स्थान पार्श्वनाथ हिल नाम से प्रसिद्ध है। आपके समय में ही अंतिम बारहवें चक्रवर्ती ब्रह्मदत्त हुए। जिनका उल्लेख बौद्ध ग्रंथों में भी मिलता है।

अपील

प्रति

पत्र क्रमांक-
दिनांक-
स्थान-

श्रीमान् नरेन्द्र मोदी जी
प्रधानमंत्री-भारत सरकार
एवं अध्यक्ष-नीति आयोग,
प्रधानमंत्री कार्यालय,
152, साउथ ब्लॉक, रायसीना हिल्स,
नई दिल्ली-110011
E-mail-appt.pmo@gov.in, pmosb@pmo.nic.in

द्वारा- श्रीमान् ....
....

विषय-नीति आयोग, नई दिल्ली के 15 वर्षीय विजन डॉक्यूमेंट-2035 'में पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम' (पीडीएस) के 'फूड आइटम्स' की सूची में से 'अंडा, मांस, मछली एवं चिकन' आदि मांसाहारी सामग्री हटाय जाने के बाबत।

मान्यवर!

देश के agriexchange.apeda.gov.in, punjabkesari .in, jagaran.com, livehindustan.com, navpradesh.com, hindinews24online.com, economicstimes.indiatimes.com, bhaskar.com, amarujala.com, financialexpress.com, dailyhunt, tribuneindia.com, currentaffairs.gktoday.in, moneycontrol.com, fresherslive.com, poultryindia.com आदि के अलावा भी देश के अन्य प्रमुख समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचारों एवं इंटरनेट पर 18 दिसम्बर 2019 इत्यादि को उपलब्ध जानकारियों के अनुसार भारत सरकार के थिंक टैंक 'नीति आयोग, नई दिल्ली' एक नए प्रस्ताव पर काम कर रहा है। पोषण के मामले में देश की रैंकिंग सुधारने के लिए नीति आयोग सस्ते दामों में उक्त उत्पादों को मुहैया कराने हेतु एक नया प्रस्ताव तैयार कर रहा है। इस 15 वर्षीय योजना का 'विजन डॉक्यूमेंट-2035' के रूप में नाम दिया जा रहा है। इसी वर्ष (2020 ई.) पेश कर इसे 1 अप्रैल, 2020 से लागू किया जाना संभावित है।

नीति आयोग के सदस्य श्री प्रो.रमेशचंद के अनुसार लोगों में इस विजन डॉक्यूमेंट के माध्यम से भोजन में भरपूर प्रोटीन की आपूर्ति किया जाना लक्ष्य है। आयोग के ही शीर्ष अधिकारियों के अनुसार वर्तमान में राशन दुकानों पर गेहूँ, चावल, जौ, चना, दालें, मोटे अनाज और शक्कर आदि सामग्रियाँ मिलती हैं। किंतु इनसे प्रोटीन की पर्याप्त पूर्ति नहीं हो पा रही है। अत: कुपोषण की समस्या से निजात दिलाने के लिए सब्सिडी पूर्वक इन मांसाहारी खाद्य सामग्रियों को शामिल कर, इन्हें भी बेचे जाने पर 1.84 लाख करोड़ रुपयों का अतिरिक्त भार सरकार पर पड़ेगा।

प्रधानमंत्री कार्यालय के निर्देशन में नीति आयोग विजन डॉक्यूमेंट-2035 में इन मांसाहारी खाद्य सामग्रियों को जोड़ने की योजना बना रहा है। शारीरिक पोषण एवं सुरक्षा को दृष्टि में रखकर 'पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम' (पीडीएस) के जरिए भारत सरकार 'फूड आइटम्स' की सूची को और अधिक व्यापक बनाने जा रही है। इन उपर्युक्त मांसाहारी खाद्यों में से एक या एक से अधिक प्रोटीनयुक्त फूड्स को शामिल कर लोगों के शारीरिक कुपोषण, एनीमिया,

अविकसित और बौनेपन की समस्या से निपटने का प्रयास किया जाना है।

ध्यान रहे कि अंडा, मांस, मछली या चिकन आदि ये सभी खाद्य सामग्रियाँ मांसाहारी खाद्य के रूप में भारत सरकार के द्वारा अधिसूचित की जा चुकी है। **'भारत का राजपत्र' (असाधारण), भाग-III, खंड 4, दिनांक 1 अगस्त, 2011 को 'केन्द्रीय स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय, नई दिल्ली' के द्वारा 'भारतीय खाद्य सुरक्षा ओर मानक प्राधिकरण, नई दिल्ली'** की अधिसूचना क्रमांक- एफ.नंबर-2-15015/30/2010, पृष्ठ 1 से 28 पर प्रकाशित हुई है। देखें, (www.fssai.gov.in)। इसके अंतर्गत 'खाद्य सुरक्षा और मानक (पैकेजिंग एंड लेबलिंग) विनियमावली-2011' में अध्याय 1, 'साधारण' शीर्षकगत परिभाषा में 'मांसाहारी खाद्य पदार्थ' को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया गया है-

[हिन्दी]-1.2.1.7-'मांसाहारी खाद्य' से एक ऐसा खाद्य अभिप्रेत है जिसमें कि एक संघटक के रूप में दुग्ध या दुग्ध उत्पादों को छोड़कर पक्षियों, ताजे जल के अथवा समुद्र के जीव-जंतुओं, अथवा अण्डों, अथवा किसी भी पशु जनित उत्पाद सहित, कोई भी समग्र जीव-जन्तु अथवा उसका भाग अंतर्विष्ट हो।''

[English] 1.2.1.7-"Non-Vegetarian food" means an article of food which contains whole or part of any animal including birds, fress water or marine animals or eggs or products of animal origin, but excluding milk or milk products, as an ingredient."

इससे सुस्पष्ट है कि अंडा, मांस, मछली व चिकन आदि खाद्य पदार्थ उपर्युक्त परिभाषा के अनुसार 'मांसाहारी खाद्य' के अन्तर्गत ही निर्धारित होते हैं। यह कितनी दुःखद बात है या सोची, समझी रणनीति एवं दुश्चक्र के माध्यम से देश के नागरिकों की शारीरिक कुपोषणता को दूर कराने के चक्कर में नासमझ, ग्रामीण, भोले या अज्ञानीजनों को जहाँ मांसाहार का सेवन राशनदुकानों में सब्सिडी देकर उपलब्ध कराया जाएगा, वहीं शासन द्वारा देश भर में मांसाहार को प्रोत्साहित भी किया जाएगा।

इस देश की संस्कृति एवं आचार-विचार की शुद्धता प्राचीनकाल से ही अहिंसक जीवन शैली के अनुरूप चली आ रही है। इसी कारण भगवान् ऋषभदेव, राम, कृष्ण, महावीर और बुद्ध के उपदेशों को सुन-समझकर जनमानस द्वारा अपनी सारी जीवनशैली को निरामयरूप से परिचालित किया जाता रहा है। महात्मा गांधी द्वारा भी देश की स्वतंत्रता को अहिंसा के माध्यम से ही प्राप्त किया गया था। जहाँ देशभर में शासन द्वारा महात्मा गांधी की 150 वीं जन्म जयन्ती के प्रसंगों को समारोह पूर्वक आयोजित कर, उनके जीवन संदेशों को प्राचारित/प्रसारित किया जा रहा है, वहीं उनके अहिंसा के मूल सिद्धांत की ही हत्या करके यह विचन डॉक्यूमेंट-2035 तैयार किया जा रहा है।

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में सभी विदित हो चुका है कि मांसाहारी खाद्य पदार्थों के सेवन करने के कारण ही अतीत में मेड काऊ डिसीज, इबोला, सॉर्स, स्वाइन फ्लू आदि जैसे अनेक घातक बीमारियों तथा ई-कोली, बोबिन स्पांजीफार्म, एनसेफेलाइटिस्, ट्रिकीनॉसिस, सालमोनेला एवं स्क्रेपी की चपेट में आ जाने से बड़ी संख्या में मनुष्यों का अकाल में ही मरण हो चुका है। वर्तमान में चीन सहित विश्व भर में फैली हुई कोरोना वायरस (कोविड-2019) महामारी, मांस, मांसाहारी एवं सी-फूड आदि अन्य खाद्य पदार्थों के सेवन किए जाने के कारण भीषण रूप धारण कर चुकी है एवं इससे जनहानि का आकड़ा प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। ऐसे घातक कोरोना वायरस के प्रभाव से मांसाहार का सेवन करने वाला तो प्रभावित होगा ही, किंतु ऐसे वायरसों के फैलने पर होने वाले दुष्प्रभावों के कारण गैर मांसाहारियों को भी इनका शिकार बनना पड़ेगा।

जिन राशन दुकानों में ये मांसाहारी सामग्रियाँ भविष्य में बेची जाएँगी, उन्हें संचालित करने वाले गैर मांसाहारी वर्ग के लोगों को ऐसी दुकानों का व्यवसाय छोड़कर बेरोजगार होना पड़ेगा। साथ ही अहिंसा, शाकाहार आदि मानव मूल्यों में आस्था रखने वाले क्रेताओं को ऐसी दुकानों से राशन सामग्री को नहीं खरीदना उनकी मजबूरी हो जायेगी। इस कारण देश की बहुत बड़ी संख्या में जनजीवन गम्भीर रूप से प्रभावित होगा।

भारत वर्ष के अनेक धर्म व समाजों के शाकाहार, अहिंसा, जीवदया, प्राणी मैत्री, करुणा, प्रकृति व पर्यावरण संरक्षण प्रेमी समस्त आवेदकगण जनस्वास्थ्य, जनसुविधा और जनभावनाओं को दृष्टि में रखकर आपसे विनम्र अनुरोध करते हैं कि नीति आयोग, नई दिल्ली के विजन डॉक्यूमेंट-2035 की 15 वर्षीय योजना के क्रियान्वन होने से पहले ही पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन सिस्टम (पीडीएस) के फूड आइटम्स की सूची में से अंडा, मांस, मछली तथा चिकन आदि समस्त मांसाहारी खाद्य पदार्थों को अविलंब हटाया जाना सुनिर्धारित किया जाए। शारीरिक कुपोषण के शिकार हुए लोगों की शारीरिक पुष्टता एवं आरोग्यवर्धन को लक्ष्य में रखकर प्रोटीन के अन्य स्रोतों को उसमें समाविष्ट किया जाए।

हमें विश्वास है कि हमारे विनम्र अनुरोध पर अवश्य ध्यान देकर आप उचित कार्रवाई करने के निर्देश संबंधितजनों/ अधिकारियों को प्रदान करेंगे। इस विषय में की गई कार्रवाई की प्रति हमें भी उपलब्ध हो, ऐसी अपेक्षा है।

सादर।

निवेदक-

(नाम- ....)

पता- ....

मो-.................................

प्रतिलिपि-

1. श्रीमान् उपाध्यक्ष एवं समस्त सदस्य महोदयजी
   नीति आयोग (नेशनल इंस्टीट्यूशन फॉर ट्रांसफॉर्मिंग इंडिया- NITI)
   योजना भवन, संसद मार्ग, नई दिल्ली-110011

E-mail- श्री डॉ. राजीव कुमारजी- vch-niti@gov.in
श्री बिबेक देबरायजी- bibek.debroy@gov.in
श्री वी.के. सारस्वतजी- vk.saraswat@gov.in
श्री रमेशचन्दजी- rc.niti@gov.in
श्री विनोदकुमार पॉलजी- vinod.paul@gov.in
श्री अमिताभ कान्तजी-amitabh.kant@nic.in
CEO-niti@gov.in

2. देश के समस्त धर्मों के धर्माचार्य महोदयजी
3. माननीय समस्त केंद्रीय मंत्री, राज्य मंत्री महोदयजी
4. श्रीमान् सांसद महोदयजी- लोकसभा एवं राज्यसभा, नई दिल्ली
5. देश की सभी राजनीतिक पार्टियों के पदाधिकारीगणजी
6. देश के राजनेतागणजी एवं जागरुक संस्थाओं/ संगठनों के पदाधिकारीगणजी

नोट- भाव विज्ञान में छपे इस पत्र की छाया प्रतियाँ कराकर अधिक से अधिक संबंधित लोगों तक पहुँचाने का विनम्र अनुरोध है।

- संपादक

संगोष्ठी व शिविर सानन्द सम्पन्न हुआ

मध्यप्रदेश की राजधानी झीलों की नगरी भोपाल अशोकागार्डन में पूज्य गुरुवर अध्यात्म योगी, विद्यारत्न, आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज के ससंघ चातुर्मास के दौरान मुनि दीक्षाओं के उपरान्त दिनांक 19.10.2019, 20.10.2019 को दो दिन के रूप में तीर्थोदय काव्यों पर सम्यग्ज्ञान संवर्धन राष्ट्रीय विद्वत् संगोष्ठी सम्पन्न हुई। जिसमें निर्देशक के रूप में डॉ. शीतलचंदजी जैन जयपुर, पं. लालचन्द्रजी जैन 'राकेश' भोपाल और संयोजक के रूप में श्री वीरेन्द्र शास्त्री ने गौरवपूर्ण कर्त्तव्य निभाया। संगोष्ठी में करीब 30-40 विद्वान् पधारे थे। सबको सम्मानित कर उन्हें बेगादि देकर बहुमान किया गया। 19 तारीख को प्रातःकालीन प्रथम सत्र में अध्यक्षता के रूप में प्रो. प्रशान्त जैन भोपाल शोभित हुये। आमंत्रित विद्वानों द्वारा चित्र अनावरण व दीप प्रज्वलन किया गया तथा वात्सल्यमूर्ति आचार्य गुरुवर आर्जवसागरजी महाराज के करकमलों में शास्त्र भेंट किया। तदुपरान्त सत्र का प्रारम्भ पूज्य मुनिश्री विशोधसागरजी महाराज के मंगलाचरण से प्रारम्भ हुआ। आलेख वाचन में पहले डॉ. शीतलचन्दजी जैन जयपुर, डॉ. प्रशान्तजी जैन भोपाल, डॉ. कवि. नरेन्द्र जैन भोपाल रहे और उद्बोधन हेतु पूज्य मुनिश्री विलोकसागरजी महाराज को सौभाग्य प्राप्त हुआ। प्रथम सत्र का संचालन ब्र. वीरेन्द्र शास्त्री ने किया। अन्त में मंगल आशीर्वाद व आशीर्वचन समीक्षा के रूप में पूज्य आचार्य गुरुदेव ने मंगल प्रवचन दिये।

दोपहर में करीब 3:00 बजे द्वितीय सत्र प्रारम्भ हुआ। जिसमें अध्यक्षता के रूप में पं. श्री लालचन्द्रजी 'राकेश' भोपाल थे। सारस्वत अतिथि के रूप में प्रो. रतनचंदजी भोपाल थे। आलेख वाचकों की श्रृंखला में प्रथम 1. डॉ. पुलकजी गोयल जबलपुर, 2. डॉ. रतनचन्दजी जैन, 3. पं. लालचंद्रजी जैन, 4. पं.नन्हें भाई शास्त्री सागर, 5. पं. मनोजजी शास्त्री सागर, 6. इंजी. महेन्द्रकुमारजी जैन भोपाल, 7. बहिन आकृति जैन भोपाल, 8. डॉ. अरविन्दकुमार जैन और पूज्य मुनिश्री महत्सागरजी महाराज ने सुष्ठु रूप से आलेख वाचन किये। द्वितीय सत्र का संचालन पं. राजेश शास्त्री ललितपुर वालों ने किया अन्त में पूज्य आचार्य गुरुवर के मंगलप्रवचन सम्पन्न हुए।

20 तारीख की प्रातःकालीन तृतीय सत्र के मंगलाचरण पूज्य आर्यिका माँ प्रतिभामति माताजी ने किया। अध्यक्षता का सौभाग्य डॉ. देवकुमारजी जैन वैज्ञानिक दिल्ली वालों को प्राप्त हुआ। सारस्वत् अतिथि के रूप में डॉ. पुलकजी गोयल जबलपुर को शोभित किया गया। आलेख वाचकों में 1. ब्र. प्रदीपजी पीयूष जबलपुर, 2. ब्र. वीरेन्द्र शास्त्री हीरापुर, 3. डॉ. अजित जैन भोपाल, 4. इंजी. अर्चित जैन भोपाल, 5. डॉ. देवकुमारजी जैन दिल्ली वालों ने अपने-अपने आलेख प्रस्तुत किये । इस सत्र का संचालन पं. अनिलशास्त्री सागर, पं. महेश शास्त्री बड़ामलहरा ने किया। अन्त में पूज्य आचार्य गुरुवर के विशेष मंगल

प्रवचन सम्पन्न हुए।

दोपहर के चतुर्थ सत्र में डॉ. आशीष जैन में मंगलाचरण किया अध्यक्षता इंजी. बहिन ऋषिका जैन दमोह ने निभायी। सारस्वत अतिथि के रूप में आशीषजी आचार्य थे। आलेख वाचकों में 1. श्रीमती डॉ.अंजली जैन, 2. डॉ. श्री आशीष जैन आचार्य सागर, 3. श्री पं. दीपचन्द्रजी जैन, 4. डॉ. श्री आशीष जैन, 5. डॉ.श्री सुधीरजी जैन (डिप्टी कमिश्नर) भोपाल, 6. श्री सुनीलजी जैन मासाब भोपाल, तथा पूज्य मुनिश्री विबोधसागरजी महाराज, पूज्य मुनिश्री विशोधसागरजी महाराज ने अपने-अपने तीर्थोदय काव्योपरि सुष्ठु आलेख प्रस्तुत किये। चतुर्थ सत्र का संचालन श्री मनोजजी शास्त्री सागर (भगवाँ वाले) ने किया। अन्त में आचार्यश्री के मंगलप्रवचन सम्पन्न हुये। इस संगोष्ठी में आचार्यश्री के द्वारा विरचित तीर्थोदय काव्य पर करीब 70-80 लोगों के लिए अलग-अलग विषय दिये गये थे। सभी अपने-अपने आलेख लिखकर लाये; किसी ने आलेख प्रस्तुत किये और किसी ने मात्र आलेख जमा किये और गुरुवर का आशीर्वाद लिया। अन्त में सभी विद्वानों को कमेटी के लोगों द्वारा मोमन्टो और साहित्य देकर सम्मानित किया गया। सेज यूनिवर्सिटि इंदौर के वाइस चान्सलर डॉ.(प्रो.) प्रशान्त जैन ने बताया कि इस तीर्थोदय काव्य को हम कॉलेज के कोर्स में रखेंगे और लोगों को इस पर पी.एच.डी. भी करवायेंगे ऐसा उन्होंने अपने वक्तव्य में भक्तिपूर्वक कहा। सभी विद्वत् गणों का कहना है वास्तव्य में आचार्यश्री आर्जवसागरजी विरचित तीर्थोदय काव्य यह एक महाकाव्य की शृंखला में मानना चाहिए। इस प्रकार यह तीर्थोदय काव्योपरि संगोष्ठी सानन्द सम्पन्न हुयी।

पश्चात् 27 तारीख को दीपावली महापर्व श्री भ. महावीर की पूजन एवं निर्वाण लाडू चढ़ाकर हर्षोल्लास पूर्वक मनाया गया और वर्षायोग का निष्ठापन का कार्यक्रम भक्तियों को पढ़कर सम्पन्न किया गया।

3 तारीख को अष्टाह्निका महापर्व पर होने वाले श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान का पात्र चयन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। जिसमें सौधर्म इन्द्र बनने का सौभाग्य श्री सुधीर सारिका गोयल परिवार को प्राप्त हुआ और कुबेर पद डॉ. जयदीप जैन मोनू परिवार को तथा महायज्ञ बनने का सौभाग्य श्री सुनीलकुमार अध्यक्ष को और ईशान इन्द्र डॉ. आशीष जैन परिवार को सौभाग्य प्राप्त हुआ और भी इन्द्र, इन्द्राणी, श्रीपाल, मैना सुन्दरी आदि के पद भी श्राविकाओं ने प्राप्त किये।

5 तारीख को श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान आचार्य गुरुवर आर्जवसागरजी महाराज के ससंघ सान्निध्य में प्रारम्भ हुआ। प्रथम दिन घटयात्रा, देव आज्ञा, गुरु आज्ञा, ध्वजारोहण, इन्द्र प्रतिष्ठा, सकलीकरण आदि कार्यक्रम सम्पन्न हुये। इस कार्यक्रम के निर्देशक के रूप में बा.ब्र.पं. पंकजजी शास्त्री ईसरी और बा.ब्र. सुमतजी भोपाल शोभित हुये। पश्चात् 6 तारीख से प्रतिदिन सिद्धचक्र महामण्डल विधान

पूजन का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। विधाने के बीच में आचार्यगुरुवर के मंगलप्रवचन हुए जिन्होंने सिद्धचक्र महामण्डल विधान के माध्यम से होने वाले अतिशय को कथानक के माध्यम से बतलाया। श्रीपाल और मैनासुन्दरी की कथा के माध्यम से संस्कार और समाज में न्याय नीति की शिक्षा व पूजन का महात्म्य प्रकट करते हुये उपदेश दिये। अन्तिम दिन विश्वशान्ति महायज्ञ और श्रीजी की शोभा यात्रा भी सम्पन्न हुईं। इन्हीं मंगल प्रवचनों के बीच देवपद-खेवपद सम्बन्धी सम्मेदशिखर का अतिशय बतलाया जिससे लोग भाव-विभोर हो गये और अशोकागार्डन के मन्दिर की ऊपरी मंजिल पर चौबीसी निर्माण की बात कही तब मात्र दस ही मिनट में दो-दो लाख रुपयों वाले प्रत्येक प्रतिमा व वेदी हेतु 26 प्रतिमाओं व वेदी को देने वाले दानदाता भी तैयार हो गये। यह इस सिद्धचक्र महामण्डल विधान का ही अतिशय था।

पिच्छिका परिवर्तन हुआ गरिमामय-

24 तारीख को आचार्य संघ का पिच्छि परिवर्तन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। जिसमें प्रातःकाल संगीतमय भक्तिपूर्वक आचार्य गुरुवर की पूजन की गयी। पश्चात् दोपहर में दो बजे से पिच्छि परिवर्तन का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। सबसे प्रथम अशोकागार्डन की पाठशाला के बच्चों द्वारा मंगलाचरण किया गया और बाहर से पधारे डॉ. कल्याणमलजी (के.एम.) गंगवाल पूना (महा.), श्री हनुमान सिंह गुर्जर कोटा, श्री अजित जी पाटनी (महासभा अध्यक्ष) भोपाल, कवि डॉ. नरेन्द्रजी जैन भोपाल, सी.कुमार तमिलनाडु, श्री सुनीलकुमार वेजटेरियन दमोह, श्री कैलाशचन्दजी गुडगाँव आदि ने गुरु चित्र का अनावरण सम्पन्न किया और दिल्ली, सूरत, दमोह आदि से पधारे अतिथियों द्वारा दीपप्रज्वलन किया गया। पश्चात् डॉ. के.एम. गंगवाल जी पूना ने अपने वक्तव्य के माध्यम से शाकाहार और अहिंसा का संदेश व गुरु गुणगान गाया। विधायक श्री विश्वास सारंग ने अपनी गुरु समर्पण की भावना व्यक्ति की। तत्पश्चात् आचार्यश्री आर्जवसागरजी को शास्त्र भेंट का सौभाग्य श्री अश्विन वैशाली जैन सूरत वालों को प्राप्त हुआ और पादप्रक्षालन का सौभाग्य श्री लोकेश जैन दिल्ली परिवार वालों को प्राप्त हुआ। इसी बीच श्री कैलाश पुष्पराज ने आचार्य गुरुवर को श्रीफल भेंटकर आशीर्वाद प्राप्त किया और भी कैलाशचन्द गुड़गाँव, राजेन्द्रजी जैन भोपाल आदि ने भी शास्त्र भेंट किये। पश्चात् जिन युवाओं व कन्याओं ने कुछ वर्षों तक व्रत धारण किये थे उनके द्वारा पाँच पिच्छियाँ पण्डाल तक लायी गयीं। इसी बीच डॉ. नरेन्द्र जैन, कवि श्री चन्द्रसेनजी अपनी कवितायें सुनायीं। पश्चात् कण्ठपाठ प्रतियोगिता में भाग लेने वाले लोगों के लिए पुरस्कार वितरण किये गये। पुरस्कार श्री सुनीलजी जैन (कोचिंग क्लासेस वालों) के परिवार वालों की ओर से दिये गये थे। आचार्य गुरुवर के मंगलप्रवचन पिच्छिका व संयम के महत्त्व व विजय, विजया के असिधारा व्रत पर सम्पन्न हुये और पिच्छिका परिवर्तन का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। जिसमें आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज को पिच्छिका देने का सौभाग्य श्री सुनीलकुमार सपत्नीक, सुधीर-सरिता जैन (होशंगाबाद वाले)

भोपाल, कैलाशचन्द जी सपत्नीक गुड़गाँव आदि को प्राप्त हुआ। प्रथम पुरानी पिच्छिका प्राप्त करने का सौभाग्य श्री डॉ. जयदीप जैन दिवाकर (मोनू) सपत्नीक (अशोका गार्डन) को प्राप्त हुआ। द्वितीय नवीन पिच्छिका देने का सौभाग्य डॉ. कमल जैन सपत्नीक विदिशा, अंकित जैन कंट्रोल अशोका गार्डन को प्राप्त हुआ और द्वितीय पुरानी पिच्छिका प्राप्त करने का सौभाग्य श्री परितोष अमिता जैन (सोना मेडिकल) अशोका गार्डन को प्राप्त हुआ। तृतीय नवीन पिच्छिका देने का सौभाग्य संतोष जैन सपत्नीक पुष्पानगर, प्रेमचंद जैन सपत्नीक बाग उमरावदूल्हा और निर्मल जैन सपत्नीक (अशोका गार्डन) को प्राप्त हुआ और तृतीय पुरानी पिच्छिका प्राप्त करने का सौभाग्य श्री दीपक शिल्पा जैन (ट्रांसपोर्ट वाले) (अशोका गार्डन) को प्राप्त हुआ। चतुर्थ नवीन पिच्छिका देने का सौभाग्य राजकुमार जैन चनेवाले, कु. प्राची जैन (अशोका गार्डन), कु. मुक्ता जैन पहाड़ी (निवार)और और कु. सलोनी जैन सूरत को प्राप्त हुआ। और चतुर्थ पिच्छिका प्राप्त करने का सौभाग्य श्री राजकुमार जैन सफ्नीक (सूर्या हेण्डलूम) (अशोका गार्डन) को प्राप्त हुआ। पञ्चम नवीन पिच्छिका देने का सौभाग्य अशोक मधु जैन (अशोका गार्डन), विजय निशा जैन (अशोका गार्डन) और महेन्द्र जैन टड़ा वालों को प्राप्त हुआ। पञ्चम पिच्छिका प्राप्त करने का सौभाग्य श्री सुनील कीर्ति जैन (व्याख्याता) अशोका गार्डन वालों को प्राप्त हुआ। इस तरह पिच्छिका परिवर्तन का कार्यक्रम बड़ी भव्यता से विशाल पण्डाल के बीच अपार जन समूह की उपस्थिति में हर्षोल्लास पूर्वक सम्पन्न हुआ।

महत्त्वपूर्ण है अनेकान्त दृष्टि

-आचार्यश्री आर्जवसागर

आचार्य आर्जवसागर जी ने अपने प्रवचन में बतलाया कि इस हुण्डावसर्पिणी काल में जो तीन सौ त्रेसठ मतों का प्रादुर्भाव होता है, उसमें अनेकान्त को समझने वाले कुछ भव्यात्मा लोग ही धर्म-मार्ग में सुरक्षित रह जाते हैं। वे बड़े पुण्यात्मा होते हैं जो अनेकान्त व स्याद्वाद के हृदय को समझ पाते हैं। प्रत्येक वस्तु अनेक धर्मात्मक है उसके किसी पहलू को नकारा नहीं जा सकता। अनेकान्त दृष्टि में अपेक्षा दृष्टि से किसी धर्म को मुख्य-गौण करना जिसका मुख्य उद्देश्य होता है। वस्तु के पूर्ण स्वरूप को समझने हेतु सप्तभङ्गी का माध्यम भी बड़ा कार्यकारी होता है। इसी तरह नय व्यवस्था में व्यवहार-निश्चय का भी अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। द्रव्य और पर्याय दृष्टि भी द्रव्य के पूर्ण स्वरूप का ज्ञान कराती है और पुण्य कहाँ तक साथ देता है यह भी साधन, साध्य के क्षेत्र में सोचना अनिवार्य होता है। अत: आगम में भव्यों के कल्याण हेतु अनेकान्त दृष्टि रूप से बहुमूल्य बातें वर्णित की गईं हैं।

साभार- आर्जव वाणी

सम्यग्ज्ञान-भूषण तथा सिद्धांत-भूषण पदवी हेतु आवेदन-पत्र

मैं .... मधु (शहद), मांस, मद्य (नशा) का त्यागी, धर्म का अनुसरण करने वाला पिता/पति श्री .... जिला ....से भाव विज्ञान पत्रिका की सदस्यता प्राप्त है ☐ नहीं है ☐ सम्यग्ज्ञान-भूषण हेतु 400/- रुपये ☐ तथा सिद्धांत-भूषण हेतु 400/- रुपये ☐ प्रस्तुत है। मेरा पता :- ....जिला .... प्रदेश .... पिनकोड .... एस.टी.डी. कोड ....फोन नम्बर/ मोबाईल ....ई-मेल .... है।

दिनांक : हस्ताक्षर

कार्यालयीन उपयोग हेतु

श्री/श्रीमति .... पिता श्री .... को सम्यग्ज्ञान-भूषण एवं सिद्धांत-भूषण हेतु पंजीकृत किया जाता है।

दिनांक हस्ता. सम्पादक/प्रबन्ध सम्पादक

भाव विज्ञान पत्रिका की सदस्यता हेतु आवेदन-पत्र

मैं .... मधु (शहद), मांस, मद्य (नशा) का त्यागी, धर्म का अनुसरण करने वाला

पिता/पति श्री ....निवासी..

से **भाव विज्ञान पत्रिका** शिरोमणी संरक्षक सदस्य रुपये 50,000/- से अधिक ☐ पुर्ण्याजक विशेषांक संरक्षक सदस्य रूपये 24500/- ☐ परम संरक्षक सदस्य रुपये 21000/- ☐ पुण्यार्जक संरक्षक सदस्य रुपये 18,000/- ☐ सम्मानीय संरक्षक सदस्य रुपये 11,000/- ☐ संरक्षक सदस्य रुपये 5,100/- ☐ विशेष सदस्य रुपये 3,100/- ☐ आजीवन (स्थायी) सदस्यता रुपये 1,500/- ☐ राशि देकर आजीवन सदस्यता स्वीकार करता/ करती हूँ।

मेरा पता :- ....

जिला .... प्रदेश ....पिनकोड .... एस.टी.डी. कोड ....

फोन नम्बर/ मोबाईल .... ई-मेल .... है।

दिनांक हस्ताक्षर

कार्यालयीन उपयोग हेतु

श्री/श्रीमति .... पिता श्री .... को शिरोमणी संरक्षक/पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक/परम संरक्षक/पुण्यार्जक संरक्षक/सम्मानीय संरक्षक/संरक्षक/विशेष सदस्य/आजीवन सदस्यता क्रमांक ....प्रदान की जाती है।

दिनांक हस्ता. सम्पादक/प्रबन्ध सम्पादक

नोटः- ''भाव विज्ञान'' भोपाल के पक्ष में (ड्राफ्ट अथवा) स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, टी.टी. नगर, भोपाल में नेट/कोर बैंकिंग सुविधा के अंतर्गत सेविंग बैंक एकाउंट नंबर-63016576171 एवं IFS Code SBIN0030005 में नगद राशि सीधे जमा कर व रसीद प्राप्त कर प्रकाशक को रसीद की छायाप्रति प्रेषित कर सदस्यता शुल्क की रसीद प्राप्त की जा सकती है।

सदस्यता आवेदन पत्र भेजन का पता

''भाव विज्ञान'' एम-8/4, गीतांजली काम्पलैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 (म.प्र.) को प्रषित करें।

सम्पर्क : प्रधान सम्पादक-डॉ. अजित कुमार जैन - 7222963457, प्रबंध सम्पादक-डॉ. सुधीर जैन - 9425011357

भाव विज्ञान परिवार

❄❄❄❄❄ शिरोमणी संरक्षक ❄❄❄❄❄

मेसर्स आर.के. ग्रुप, मदनगंज-किशनगढ़, अजमेर ● श्री जैन निर्मल कुमार झांझरी, डीमापुर (नागालैंड) ● श्रीमती जैन नीतिका इंजीनियर हर्ष कोछल्ल, हैदराबाद ● डॉ. जैन संकेत शैलेष मेहता, सूरत ● श्री जैन श्रेणिक श्रेयस बीएल पचन्ना बैंग्लोर ● श्री प्रवीण जैन महावीर रोडलाइन्स, दमोह ● श्रीमती रजनी इंजीनियर महेन्द्र जैन ● श्रीमती अनिता डॉ. (प्रो.)सुधीर जैन ● श्रीमती नीलम राजेन्द्र जैन (एक्साइज़), भोपाल ● श्री जैन अतुल, विपुल, कल्पेश रमेशचंद मेहता, अहमदाबाद ● श्री जैन चंदूलाल राजकुमार काला, कोपरगांव ● श्री जैन संजय मित्तल, रामगंज मण्डी (कोटा) ● श्रीमती जैन विद्यादेवी (वैशाली बेन) अश्विन परिख मनन-सलोनी, सूरत।

❄❄❄❄ परम संरक्षक ❄❄❄❄

● श्री जैन गौतम काला, राँची ● श्री बुधराज जैन कासलीवाल, पांडीचेरी, ● श्री प्रेमचंद जैन कुबेर, भोपाल ● **कटनी:** श्री पवन कुमार पंकज कुमार जैन।

❄❄❄ पुण्यार्जक विशेषांक संरक्षक ❄❄❄

● प्रबंधकारिणी समिति, श्री १००८ पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मंदिर, कीर्तिनगर, जयपुर ● सकल दिगम्बर जैन समाज, दाँतारामगढ़, जिला सीकर ● श्री कुन्थीलाल रमेशचंद नरेश कुमार जैन गदिया, नसीराबाद (अजमेर) ● **रामगंजमण्डी :** सकल दिगम्बर जैन समाज एवं वर्षायोग समिति 2011, श्री जैन ताराचंद मित्तल परिवार एवं महेशकुमार अशोक कुमार महेन्द्र कुमार जैन ठोरा।

❄❄ पुण्यार्जक संरक्षक ❄❄

● श्री जैन नीरज सुपुत्र श्रीमती चन्द्रकला पाटनी, रांची ● सुशील कुमार, अभिषेक रोहित कुमार जैन, पांडीचेरी ● श्री मिट्ठनलाल जैन, नई दिल्ली।

❄ सम्मानीय संरक्षक ❄

● श्री वर्धमान विक्रमादित्य जैन, गोवा ● श्री जैन पदमराज होळल, दावणगेरे ● श्री जैन सोहनलाल कासलीवाल, सेलम ● श्री जैन संजय सोगानी, राँची ● श्री जैन आकाश टोंग्या, डॉ. जयदीप जैन मोनू,भोपाल ● श्री महावीरप्रसाद संजयकुमार जैन, इस्पात एंटरप्राईजेस प्रा.लि., कलकत्ता ● श्रीमती जैन संगीता हरीश बजाज, टीकमगढ़ ● श्रीमती कमलाबाई अशोक जैन साहबजाज, अजमेर ● श्री घनश्याम जैन, कृष्णा नगर, दिल्ली ● **जयपुर :** श्री जैन कमलजी काला, कु. इन्द्रसेना जैन ● **सूरत :** श्री नरेश जैन, (दिल्ली वाले), श्री जैन निलेशभाई शाह। ● **पथरिया (दमोह) :** श्रीमती जैन उषा पदम मलैया ● **गुड़गांव :** श्री हिमांशु कैलाशचंद जैन।

❄ संरक्षक ❄

● **रीवा:** श्री जैन विजय अजमेरा, डॉ. अश्विनी जैन ● **छतरपुर:** श्री के. सी. जैन, डि. एक्साइज अधिकारी ● श्री अजित प्रसाद जैन सराफ, रेवाड़ी ● **दिल्ली :** श्री विजयपाल जैन, शाहदरा, श्री राकेश जैन, रोहिणी ● **हस्तिनापुर (मेरठ):** श्री दिगम्बर जैन तीर्थ बड़ा मंदिर ● **गुड़गांव:** श्री संजय जैन ● **गाजियाबाद :** श्रीमती सुषमा रवीन्द्र कुमार जैन ● **कलकत्ता:** श्री जैन कल्याणमल झांझरी ● **भोपाल:** श्रीमती सुधा महेन्द्र कुमार जैन, ● **कोटा:** श्री कस्तूरचंद सुरेश कुमार जैन, रामगंजमण्डी ● **गुवाहाटी:** श्रीमती जैन हीरामणी चांदमल सेठी ● **पांडीचेरी :** श्री जैन विमलचंद मोहित कुमार ठोलिया ● **सूरत :** श्रीमति विमला मनोहर जैन, श्री निर्मल जैन ● **जयपुर :** श्री एस.एल. जैन (बागड़िया), श्री जैन गुणसागर ठोलिया-किशनगढ़-रेनवाल, श्री जैन श्रेयांस कुमार पाटोदी, श्रीमती जैन अनिता पारस सौगानी, श्री जैन जितेन्द्र अजमेरा, श्री जैन ओम कासलीवाल, श्री जैन मंगलचंद हरकचंद मोतीलाल कमलचंद छाबड़ा, श्री विजय कुमार जैन छाबड़ा ● **उदयपुर:** श्री प्रकाशचंद जैन, श्रीमती निधी राहुल जैन-अनुपम ग्रुप ऑफ कम्पनीज, श्री जैन अशोक कुमार ड्वारा ● **इंदौर :** श्री सचिन जैन, स्मृति नगर ● **पथरिया (दमोह) :** श्री मुकेशकुमार जैन (संजय साईकिल)।

❄ विशेष सदस्य ❄

● **दमोह :** श्री मनोज जैन दाल मिल ● **अजमेर :** श्री भागचन्द जैन, नसीराबाद ● **सूरत :** श्री जैन हर्षद भाई मेहता, श्री जैन अरविंद भाई गांधी, श्री जैन संयम संदीप भाई शाह, श्री जैन रमेश मोहनलाल दौसी, श्री जैन कोठारी बाबूलाल कचरालाल, श्री जैन कन्हैयालाल कचरालाल मेहता, श्री जैन कमलेश शाह, श्री जैन हसमुख मगनलाल शाह, श्री जैन चम्पालाल लक्ष्मीलाल सिंघवी, श्री जैन नीलकेष बालू शाह मढ़ी, श्रीमती जैन सुनिता विद्या प्रकाश दीवान, श्री जैन अशोक कुमार गंगवाल खाच्छरियावास, श्रीमती जैन गुणमाला देवी दीपचंद सेठी ● **भोपाल:** श्री राजकुमार जैन, बिजली नगर ● **कटनी :** श्री शुभमकुमार सुभाषचंद जैन, ● **पन्ना :** श्री महेन्द्र जैन, पवई।

❄ नवागत सदस्य ❄

● **भोपाल:** श्री सुनील जैन मास्टर साहब, श्री बालचंद्र जैन ● **कोटा:** श्री आशीष जैन

मंचासीन आ.श्री आर्जवसागरजी ससंघ वर्षायोग 2019 भोपाल।

राष्ट्रीय संगोष्ठी में 'आध्यात्मिक संत-आर्जवसागर' पुस्तक का विमोचन करते हुए विद्वतगण व रचयिता पं.लालचंद 'राकेश'

अशोका गार्डन भोपाल में राष्ट्रीय विद्वत संगोष्ठी में पं. लालचन्दजी का सम्मान करते हुए सुनील जैन एवं सुधीर जैन आदि।

19, 20 अक्टू. 2019 को तीर्थोदय काव्योपरि राष्ट्रीय विद्वत संगोष्ठी में सम्मान पाते हुए डॉ. शीतलचंदजी जयपुर।

तीर्थोदय काव्योपरि राष्ट्रीय विद्वत संगोष्ठी में आ.श्री आर्जवसागरजी का आशीष लेते हुए डॉ. रतनचंदजी भोपाल।

भोपाल में तीर्थोदय काव्योपरि राष्ट्रीय विद्वत संगोष्ठी में पधारे ख्यातिलब्ध विद्वतगण आ. आर्जवसागरजी को वंदन करते हुए।

पिच्छिका परिवर्तन में आ.श्री आर्जवसागरजी से नवीन पिच्छिका ग्रहण करती हुईं आर्यिकाश्री प्रतिभामति माताजी।

पिच्छिका परिवर्तन में आ.श्री आर्जवसागरजी से नवीन पिच्छिका ग्रहण करती हुईं आर्यिकाश्री सुयोगमति माताजी।

रजि. क्रं. MPHIN/2007/27127

भोपाल में प्रवचन के दौरान मंचासीन आचार्यश्री आर्जवसागरजी महाराज ससंघ।

आ.श्री आर्जवसागरजी के दर्शनार्थ पधारे मुनिश्री पुराणसागरजी महाराज।

भोपाल नगर में आर्यिकाद्वय के विहार के दौरान ध्वज लेकर चलते हुए डॉ. अजित जैन।

भोपाल में आर्यिकाश्री प्रतिभामति एवं श्री सुयोगमति माताजी आहारचर्या सम्पन्न कर आते हुए भक्तगण।

आर्यिकाश्री प्रतिभामति माताजी के लिए आहार करवाते हुए भक्तगण।

प्रवचन के दौरान आर्यिकाश्री प्रतिभामतिजी एवं आर्यिकाश्री सुयोगमति माताजी

आर्यिका संघ का पड़गाहन करते हुए भोपाल नगर के भक्तगण।

आर्यिकाद्वय का शुभाशीष प्राप्त करते हुए भक्तगण

स्वामी एवं प्रकाशक : श्रीमती सुषमा जैन द्वारा मुद्रक : पवन कुमार जैन मो.:9826240876 द्वारा पारस प्रिन्टर्स, 207/4, सांईबाबा काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल से मुद्रित एवं एमआईजी-8/4, गीतांजली काम्पलेक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित।
सम्पादक - डॉ. अजित कुमार जैन, MIG-8/4, गीतांजली काम्प्लैक्स, कोटरा सुल्तानाबाद, भोपाल-462003 फोन : 7222963457, 9425601161